

रसिक दोउ निरतत रंग भरे।
रास कुंज में रास मंडल रचि, जनक लली रघु लाल हरे।।
अमित रूप धरि करि कछु चेटक, जुग जुग तिय मधि श्याम अरे।।

दो०–जयति मैथिली लाड़िली, जय जय पिय चितचोर।
सीताशरण सनेह दै, कीजै रति रस बोर ॥६ख॥

इति श्री युगल रहस्य माधुरी बिलाशे श्री मैथिली पूर्व
राग विप्रमम्भ रस बिकाशे सीताशरण सुमति प्रकाशे
षष्टमोऽध्यायः सम्पूर्णमस्तु



* सप्तमोऽध्यायः *

* बिबाह रास प्रकरणम् *

छन्द रोला:–

बोले सूत सुजान सरस मन हरन सुबानी।
पावन पतित पुनीत करन हारी सुख खानी ॥ १ ॥
हे शौनक मुनिवृन्द सुनहु सब सावधान चित।
सिय पिय ब्याह रहस्य परम कमनीय अपरमित ॥ २ ॥
तदपि स्वमति अनुसार कहब हम तुमहिं सुनाई।
सुनहु सकल धरि ध्यान हृदय धरि सिय रघुराई ॥ ३ ॥
श्री हरि भक्त प्रधान कीर्तन कार महाना।
अखिल लोक उपकार निरत सब भाँति सुजाना ॥ ४ ॥
चक्रवर्ति अवधेश कुँवर श्री राम चरण रत।
रघुवर कृपा सु पात्र परम प्रिय कोह मोह गत ॥ ५ ॥
श्री नारद अस नाम सकल सुर असुर सु पूजित।
रसना अति कमनीय राम रघुवर यश कूजित ॥ ६ ॥

परम उदार समर्थ ज्ञान सागर गुण धामा।
रहित समस्त विकार सतत ध्यावत सिय रामा ॥ ७ ॥
श्री मैथिली विचित्र प्रेम की दशा निहारी।
गवने नारद अवध मध्य जहँ श्री धनुधारी ॥ ८ ॥
गये देव ऋर्षि तहाँ एकान्तिक रहि जहँ रघुवर।
सुमिरत श्री मैथिली प्रेम पागे प्रभु मुद भर ॥ ९ ॥
विश्व रमयिता राम अखिल जग आनँद दाता।
"सीताशरण" सुस्वामि सरस सज्जन जन त्राता ॥१०॥
सरल सहज सुकुमार मार मद मथन सु छबिधर।
सुठि सुन्दर सुख सदन सबनि मन हर सनेह घर ॥११॥
बैठे लखि रघुवीर देव ऋषि परम सुखारी।
मधुर प्रेम रस भरित सरस प्रिय गिरा उचारी ॥१२॥
जयति अमल आनन्द कन्द अभिराम कृपाला।
बारिज लोचन राम श्याम सुख धाम रसाला ॥१३॥
जय जय नृपति कुमार चराचर सुकृत स्वरूपा।
जय मधुराधर मधुर मूर्ति अनवद्य अनूपा ॥१४॥
जय जय चन्द्र समान अखिल जग प्रद अह्लादा।

हम अनादि तव भृत्य स्वामि तुम सतत हमारे।
सब बिधि पूरण काम काम हर अवध दुलारे ॥१८॥
हे नर श्रेष्ठ उदार अकल अज अगुन गुनाकर।
तव पद तल की शरण अहैं हम हे सुषमाधर ॥१९॥
उत्तम चरित अनूप अमृत रसमय अति पावन।
करि मम पोषण करियनाथ रस निधि मन भावन ॥२०॥
यद्यपि तुम दोउ नित्य अचल सम्बन्ध सनातन।
तदपि कृतारथ करन हेतु भक्तन प्रसन्न मन ॥२१॥
देन अमल आनन्द हेतु आश्रित हित लागी।
लियो मनुज अवतार सतत सज्जन अनुरागी ॥२२॥
तुम दोउ परम अभिन्न प्रेम पूरक परमीशा।
सेवत पद सुर निकर नाग नर अहिप मुनीशा ॥२३॥
दम्पति मिलि रस बरसि रसिक जन करिय सुखारी।
रसिकेश्वर हृदयेश यही वर विनय हमारी ॥२४॥
हे श्रीराम उदार मार मोहक मद भंजन।
मैं तव गुणगण ललित सतत गावौं मन रंजन ॥२५॥
वीणा मधुर बजाय गाय कीरति कमनीया।
निरखौं चरित रसाल अमल मूरति रमनीया ॥२६॥
मुक्त संग मैं यदपि तदपि तव रूप निहारी।
पावौं परमानन्द प्रेम रस रास विहारी ॥२७॥
ध्यावौं नित पद कंज मंजु अनुराग सहितनित।
चरित सुधासरि मध्य करौं अवगाहन प्रमुदित ॥२८॥

जन्म सुफल तव दर्श चरित रसनिधि अति पावन ।
सुनत सुनावत ऋषि समाज को मैं जग भावन ।।२६।।
अब मम विनती एक सुनहु प्रभु राजिव नयना ।
विधिवत विद्यालहीं चतुर्दश सब सुख अयना ।।३०।।
सज्जन संत समाज मध्य सत्कार कीर्ति वर ।
कियो अमित विस्तार आप हे अनद्य सुछबिधर ।।३१।।
तव स्वरूप को ज्ञान शास्त्र श्रुति वरणि बतायो ।
न इति न इति करि थकेउ यथारथ जानि न पायो ।।३२।।
अस करतब तुम किये वाहि साधारण प्रानी ।
अब जानत सब लोग चरित लखि सारँग पानी ।।३३।।
गूढ़ भेद वेदान्त शीघ्र ज्ञानिहुँ नहिं जानत ।
सो लखि ललित रसाल चरित सब लोक बखानत ।।३४।।
व्यापक परम समर्थ आप सर्वेश्वर नाथा ।
परमात्मा पर तत्त्व अमल कीरति गुण गाथा ।।३५।।
अजै अपरमित शक्ति आपने जगहिं दिखाई ।
दुर्लभ भोग महान अमित भोगेउ रघुराई ।।३६।।
दिव्य अनेकन बाल परम सौन्दर्य सालिनी ।
मृग नयनी पिकवैनि सकल सुर निकर लालिनी ।।३७।।
देव सुता नागरी गोप कन्या सुकुमारी ।
बहु महिपालन सुतनि संग रमि अवध विहारी ।।३८।।
दियो अमित सुख स्वाद उनहिं निज अंग रमाई ।
करि क्रीड़ा कमनीय सबहिं रस सिन्धु डुबाई ।।३९।।

महाँरास रस स्वाद अनुभवेउ तुम रघुनन्दन।
यद्यपि पूरण कामं सकल विधि आनँद कन्दन ॥४०॥
होतहुँ यह कमनीय चरित त्रुटि एक महाना।
सो सुनिये धरि ध्यान कृपानिधि परम सुजाना ॥४१॥
तव अर्धात्मा परा शक्ति अह्लाद स्वरूपा।
प्रगटीं मिथिला माहिं सरल सुचि सौम्य अनूपा ॥४२॥
श्रीमिथिलाधिप लली अलिन सँग करि शिशु लीला।
मातु पिता परिवार स्वजन उर आनन्द मीला ॥४३॥
अब उत्कण्ठा प्रवल नाथ तव दर्शन चाहैं।
मिलन हेतु प्राणेश अमित व्रत नेम निबाहैं ॥४४॥
उनके बिन प्रभु अर्ध आप मैं सत्य बखानौं।
तुमरिहिं कृपा कटाच्छ रहस यह मैं भल जानौं ॥४५॥
तव चरित्र गुण शील अमित सौन्दर्थ अच्छय तब।
जनक किशोरी संग सरस सम्बन्ध होय जब ॥४६॥
हे अवधेश कुमार आप सर्वान्तर यामी।
व्यापक व्याप्य विभूति बदत बुध श्रुति पथ गामी ॥४७॥
ऊर्ध्वात्मा सर्वज्ञ परम प्रिय दास तिहारे।
जे तजि सकल विकार देह अरु गेह बिसारे ॥४८॥
दम्पत्ति युगल स्वरूप नाम लीला रस ध्यावैं।
छके महाँ छबि सिन्धु मीन इव स्वाद सु पावैं ॥४९॥
जिनको मन चित बुद्धि प्रकृति के पार विराजै।
स्वप्न न विषय विकार धाम सत चित जहँ छाजै ॥५०॥

करि सब इन्द्री दमन चित्त तव पद अरुझायो।
भाव पतन नहिं भयो सुव्रत दृढ़ करि निर्बाह्यो ॥५१॥
अस अनन्य जे भक्त भजन भावना मगन नित।
परम एकान्तिक चरित लखत हियबिच अति प्रमुदित ॥५२॥
नित नव युगल बिहार परम मन हरन रसीला।
दम्पति छबि माधुरी पियत लखि अनुपम लीला ॥५३॥
उनको नीरस ज्ञान अगुन जो ब्रह्म बतावै।
दै न सकै सन्तोष ध्यान पूर्णता न पावै ॥५४॥
एक ब्रह्म श्रुति कहत करै शंका जो कोई।
तो सुनिये धरि ध्यान शास्त्र श्रुति वरणोउ जोई ॥५५॥
यदपि एक हीं ब्रह्म तदपि बाके दो रूपा।
शक्तिवान अरु शक्ति लसत सब काल अनूपा ॥५६॥
दोउ अभिन्न बनि रहैं भिन्नता कदा न होई।
विना शक्ति के शक्तिवान को पूछ न कोई ॥५७॥
ऐसेहिं शक्तिहुँ शक्तिबान बिन दीखत नाहीं।
एहि ते सतत अभिन्न रहत एक बनि दोउ माहीं ॥५८॥
जिमि द्वै दल बिन बीज कदा कोउ उपजत नाहीं।
अस प्रभु केर बिधान लोग सब जानत आहीं ॥५९॥
जिमि द्वै दल मिलि एक बीज जग में कहलाई।
तैसेहिं शक्ती शक्तिमान एक परत लखाई ॥६०॥
स्त्री पुरुषहु लिंग भेद तुम दोउ में नाहीं।
एकै तत्त्व अभेद भेद नहिं कछु दोउ माहीं ॥६१॥

अभय सुदल जिमि एक रूप एक तत्त्व अभेदा ।
तैसेहिं पूरण ब्रह्म एक जेहि गावत भेदा ॥६२॥
द्वैता भाव न कदा होत द्वै रूप सतत नित ।
कहलावत अद्वैत युगलरस रूप सु सत्चित् ॥६३॥
जो हठ करै कि ब्रह्म एक निर्गुण बिन रूपा ।
व्यापक अमल अनीह अलख अनवद्य अनूपा ॥६४॥
तौ यह प्रश्न महान शृष्टि को बिरचन हारो ।
जो पै ब्रह्म अनीह रहित संकल्प बिचारो ॥६५॥
एकोऽहं बहु होउँ सूत्र यह सब जग जानत ।
कहहु ब्रह्म संकल्प रहित किमि क्यों भ्रममानत ॥६६॥
प्रगट प्रवल संकल्प एक ते होउँ अनेका ॥
रहित रूप संकल्प बतावत कौन विवेका ॥६७॥
जो कोइ ब्रह्म अनीह बिना संकल्प बतावत ।
एकोऽहं बहु होउँ माहिं संकल्प जनावत ॥६८॥
बिन कीने संकल्प शृष्टि कैसे बिस्तारै ।
ब्रह्म रची यह श्रृष्टि सकल श्रुति शास्त्र पुकारै ॥६९॥
ब्रह्म सत्य संकल्प सतत रस मय द्वै रूपा ।
लिंगा भेद विहीन अमल अनवद्य अनूपा ॥७०॥
जथा बीज में उभय सु दल एक तत्त्व रूप एक ।
तथा शक्ति अरु शक्तिमान मिलि होत ब्रह्म एक ॥७१॥
रस स्वरूप श्रीराम आप सब विश्व बिधायक ।
परम रसाम्बुधि रूप शक्ति तव प्रभु सब लायक ॥७२॥

यद्यपि दुर्लभ ज्ञान भक्ति बिन तदपि न शोभा ।
भक्ति ज्ञान मिलि लसत भक्ति लखि तव मनलोभा ।।७३।।
बिना भक्ति जप जोग करै साधन समुदाई ।
जग में सिद्ध कहाय भले पर तुमहिं न पाई ।।७४।।
भक्ति रूप तव शक्ति सतत ताको जो ध्यावैं ।
भक्ति कृपाते बिन प्रयास तुमको जन पावैं ।।७५।।
रस अनुभव हित नाथ आप युग रूप बनाये ।
रस प्रधान श्रृंगार सकल रस ग्रन्थन गाये ।।७६।।
सुतरु सुरस श्रृंगार बीज सम तुम दोउ बाके ।
परब्रह्म अरुशक्ति लसत अभ्यन्तर ताके ।।७७।।
व्यापकादि गुण ब्रह्म शक्ति में एक समाना ।
श्रृष्टि शक्ति ही रचति ब्रह्म शाची श्रुति भाना ।।७८।।
यथा उभय दल बिना श्रृष्टि कबहूँ नहिं होई ।
तथा ब्रह्म अरु शक्ति उभय मिलि विलसत सोई ।।७९।।
बीज माहिं दल युगल एक ही परत दिखाई ।
ऐसे शक्ति समेत ब्रह्म एक रूप लखाई ।।८०।।
जो कोइ देखै बीज दूर ते एक पुकारै ।
अभ्यन्त जो लखै तहाँ दल उभय निहारै ।।८१।।
ऐसेहिं ज्ञानी कहत ब्रह्म है एक अरूपा ।
रसमय भक्त समूह कहत नित युगल स्वरुपा ।।८२।।
दोउ को निज निज भाव सत्य सबदिन सब काला ।
दोउ को अति ही सुखद सुरुचि पद परम रसाला ।।८३।।

रस शृँगार के युगल सुदल तुम प्रीतम प्यारी।
नित्य अचल संयोग रूप फल फलत अपारी ॥८४॥
हास बिनोद बिलाश केलि कौतुक रस नाना।
तुम दोउ मिलि अनुभवत परम रस रूप सुजाना ॥८५॥
प्रीतम प्रिया प्रवीन युगल रस बस रस रूपा।
ध्यावत परम रसज्ञ रसिक जन मधुर स्वरूपा ॥८६॥
ऊर्वात्मा अति अमल नवल कल केलि निहारत।
पावत परमानन्द युगल मूरति उर धारत ॥८७॥
अस्मिन काल महान रसिक जे परम सुजाना।
मानत युगल स्वरूप ब्रह्म जेहि वेद बखाना ॥८८॥
जो ज्ञानी अति शुष्क बाद उनसे नहिं ठानत।
निशि दिन "सीताशरण" युगल रस रास बखानत ॥८९॥
जो चाहे सो करै हानि नाहिन कछु मोरी।
लागै "सीताशरण" सतत सिय पिय पग डोरी ॥९०॥
यह माधुर्य चरित्र परम रस मय सुख कारी।
बिन अह्लादिनि शक्ति अधूरा है धनुधारी ॥९१॥
परमा शक्ति अचिन्त्य आपकी जनक दुलारी।
शीघ्र प्राप्त तेहिं करहु यही वर विनय हमारी ॥९२॥
शक्ति रहित सर्वदा नाथ तुम अर्ध कहावत।
वर्णत आगम निगम संत मुनि बृन्द बतावत ॥९३॥
यद्यपि परम अभिन्न आप दोउ सतत संयोगा।
नित्य अखण्ड बिहार करत कबहूँ न वियोगा ॥९४॥

यह निज इच्छा मात्र आप दोउ कीन सुलीला।
प्रगटे भूतल माहिं स्वजन सुखदान रसीला ॥९५॥
आप अवध नृप सुवन शक्ति तव जनककुमारी।
बनि सुठि युगल स्वरूप चहत भू भार उतारी ॥९६॥
यद्यपि नित दाम्पत्य आपको बुध जन गावत।
तदपि स्वजन सुख हेतु आप लीला दर्शावत ॥९७॥
चरित महाँ माधुर्य मयी जग को दिखलायो।
शक्ति साथ दाम्पत्य भाव प्रभु नहिं दर्शायो ॥९८॥
केवल गुण करि श्रवण परस्पर युगल रसिक वर।
उपजी रति हिय माहिं परम पावन सब सुख कर ॥९९॥
याही को कहि पूर्व राग विद्वत जन गावत।
"सीताशरण सनेह सने सिय पिय हिय ध्यावत ॥१००॥

दो०-तव विरहानल में सतत, श्री मैथिली उदार।
तदपि सदा सीताशरण, सुनहु सजन सुख सार ॥१॥

तुमरी शक्ति अभिन्न रूप तव सदृश रसाला।
उत्तम कुल उद्भवा शुद्ध आचरण कृपाला ॥ १ ॥
तव अनुकूल चरित्रवती सीता असनामा।
उत्कण्ठित अति मिलन हेतु हे आनन्द धामा ॥ २ ॥
जिनने प्रभु अरुणांश प्रथम स्थिर बहु काला।
तव संयोग सु आश माहिं बितये रघुलाला ॥ ३ ॥
वेद विज्ञ मधि श्रेष्ठ आप लगि बारिज लोचन।
जिन बितयो बहु काल जलधि में भव भय मोचन ॥ ४ ॥

अमित सिद्ध समुदाय सबनि की परम स्वामिनी।
प्राणाधिक तव प्रिया जनक जाया सु भामिनी ॥ ५ ॥
तुम जानत सब बात भली बिधि राजकुँवर वर।
अन्तर यामी नाथ आप व्यापक घट घट कर ॥ ६ ॥
श्री सीता अस नाम विदित त्रिभुवन जग पावन।
यज्ञ भूमि से प्रगट भईं छबि निधि मन भावन ॥ ७ ॥
वर्तमान युग माहिं नृपति मिथिलाधिप काहीं।
अपनो पिता बनाय करहिं क्रीड़ा हर्षाहीं ॥ ८ ॥
आपहु को अवतार सुन चुकीं अबध मझारी।
मिलन लालसा प्रवल दर्श बिन रहत दुखारी ॥ ९ ॥
वे हम सब की परम इष्ट देवी सुकुमारी।
रूप शील गुण खानि मृदुल चित अवनि कुमारी ॥१०॥
नाथ अखिल तव धर्म जहाँ लगि भोग बिलाशा।
सब में वही प्रसिद्ध उनहिं कर सकल प्रकाशा ॥११॥
वे अर्द्धात्मा आप केर उनबिन तुम पूरे।
कबहुँ न कृपा निधान सदा ही रहत अधूरे ॥१२॥
तुम दोउ मिलि पर ब्रह्म एक श्रुति शास्त्र पुकारत।
ज्ञानी विमल बिशेष युगल छबि निज हिय धारत ॥१३॥
नाथ आप के सदृश जगत में और न दूजा।
केवल श्री मैथिली करत सुर नर मुनि पूजा ॥१४॥
आराध्या सब भाँति परम मान्या वह मेरी।
उनकी मति नित रहति नाथ पद पंकज नेरी ॥१५॥

आश्रित जन सुख देन हेतु लीला यह ठानी।
प्रगटे तुम दोउ अलग अलग रस निधि सुख खानी ॥१६॥
वह तव क्षणिक वियोग सकैं नाहिन सहि रघुवर।
पलक कलप ते गरुअ उनहिं तुम बिन हे छबिधर ॥१७॥
तजि सब जग आशक्ति अहर्निशि तुम को ध्यावैं।
नाथ युगल पद कंज मंजु मधि चित्त लगावैं ॥१८॥
हे प्राणेश उदार प्राण जीवन धन प्यारे।
रसिकेश्वर हृदयेश छिये कहँ दृगन सितारे ॥१९॥
हे पिय परम प्रवीन प्राण वल्लभ कहि टेरत।
हे चित चोर किशोर कहाँ कहि कै मग हेरत ॥२०॥
हे अवनीश कुमार मार मर्दन प्रमोद घर।
"सीताशरण" उस्वाँश लेत पल पल ऊँचेस्वर ॥२१॥
कब दैइहो निज दर्श रसिक चूड़ामणि नागर।
"सीताशरण" सुजान नेह पूरक रस सागर ॥२२॥
यहि विधि श्री मैथिली नाथ गुण गुनि मन माहीं।
अतिसय बिषम वियोग भरीं निशि दिवस विताहीं ॥२३॥
आप उनहिं पाइहैं नाथ हम समय बतावैं।
कृपा सिन्धु रघुवीर आप अपने मन लावैं ॥२४॥
श्री विदेह महिपाल करैं गे सीय स्वंयवर।
तहाँ अखिल जग भूप जुरैं गे सकल देव नर ॥२५॥
पन करिहैं शिव धनुष भंजि युग खण्ड बनावै।
वाही उर मम सुता स्वकर माला पहिरावै ॥२६॥

तेहि सँग होय बिबाह प्रतिज्ञा सुदृढ़ हमारी ।
तहँ नृप को पन पूरि पाइहो जनक दुआरी ॥२७॥
अस्तु कृपा निधि शीघ्र आप अब करैं प्रयासा ।
श्री मैथिली वियोग हरण करि देहु हुलासा ॥२८॥
बे तव विरह वियोग माहिं विह्वल दिन राती ।
ध्यावैं चरण सरोज रटैं तव गुन गन पाती ॥२९॥
जब तक चन्द्र न अस्त होय तव तक रघुराई ।
प्राप्ति करै निज कान्ति यही वाकी चतुराई ॥३०॥
तिमि हे राज किशोर परम रस बोर सुछबिधर ।
प्राप्त करिय निज क्रान्ति रूप मैथिली सुभग तर ॥३१॥
नाथ आप श्री रामचन्द्र वे कान्ति तिहारी ।
अस मन करहु बिचार सरस चित रास बिहारी ॥३२॥
ललित चन्द्रिका पाय चन्द्र शोभा अति पावत ।
रहित चन्द्रिका कदा चन्द्र नहिं नाम कहावत ॥३३॥
अस मन करहु बिचार आप समरथ सब लायक ।
नमस्कार शत सहस चरण मधि मम रघुनायक ॥३४॥
हे सर्वेश उदार नाथ अब चहौं सिधावन ।
सुनि मुनि बचन रसाल रसिक वर प्रभु जग पावन ॥३५॥
कीन्हों मुदित प्रणाम सुभग आसन बैठारी ।
पूजे मुनि पद कंज सबिधि प्रभु परम सुखारी ॥३६॥
करि पूजन स्वीकार दिव्यतर सिद्ध मुनीशा ।
प्रभु मूरति उर धारि जपत जेहि बिधि हरि ईशा ॥३७॥

सिद्ध मार्ग से गये देव ऋषि श्री हरि लोका ।
जहाँ न लेश प्रपंच एक रस अमल अशोका ।।३८।।
इत श्रीराम कृपाल सुनत नारद की बानी ।
श्री मैथिली स्वरूप शील गुण वय छबि खानी ।।३९।।
अमल अचल हिमवान सरिस धीरज युत रघुवर ।
काँप उठे सुख धाम शोक दुख हरन सु छबिधर ।।४०।।
बार बार महि परत मुर्छि पुनि उठि रघुनन्दन ।
विरह व्यथा बलवान बढ़ी व्याकुल जग वन्दन ।।४१।।
मनोरमा मैथिली मंजु मूरति मम प्यारी ।
श्रवण द्वार हिय गईं तभी से बिकल सुरारी ।।४२।।
श्री भरताग्रज श्याम सक्रम जग आनँद दाता ।
अति जड़वत ह्वै रहे रसिक मनहर जन त्राता ।।४३।।
चित चिन्ता अति चढ़ी कबहुँ बिश्राम न पावैं ।
सुमिरि सुमिरि गुण ग्राम राम अति चाह बढ़ावैं ।।४४।।
सोचत सतत सु शील सरल सुषमा सुख सागर ।
कब मिलिहैं मम प्रिया प्रेम रस रूप उजागर ।।४५।।
भरीं परम सौहदार्द शील गुण खानि सुभग तर ।
कोटि रमा रति उमा होहिं वलिहार सु छबि पर ।।४६।।
भृकुटि कुटिल कमनीय सरस चितवनि मनहारी ।
पावन परम प्रवीन प्रेम पूरित सुकुमारी ।।४७।।
मम प्राणाधिक प्रिया मधुर मूरति रति रमनी ।
कब मिलिहो मैथिली मंजु वैनी गज गमनी ।।४८।।

अस चिन्ता ब्यालिनी डहेउ अवधेश कुँवर को ।
याते कछु न सुहाय लगत नहिं प्रिय छबिधर को ॥४६॥
जैसे श्री मैथिली आप लगि रहैं दुखारी ।
चिन्तित निशि अरु दिवस सतत ब्याकुल मनभारी ॥५०॥
सुमिरत श्री अवधेश ललन गुण गण रस पागी ।
कब मिलिहो चित चोर यही संतत रट लागी ॥५१॥
तैसेहिं रसिक नरेश प्रिया बिन परम दुखारी ।
प्रिय न लगत पट असन बिभूषन कौन सँवारी ॥५२॥
कोउ पदार्थ नहिं सुखद न उत्सव आनँद दायक ।
सब से भये उदास नृपति सुत श्री रघुनायक ॥५३॥
सुर दुर्लभ अति दिव्य बसन भूषन सुठि माला ।
परम सुगन्धन भरे अतर मन हरन रसाला ॥५४॥
मन मोहन गज बिपुल अमित वर बाजि सुभग तर ।
माम सरिस प्रिय रूप गमन मन इव अद्भुत वर ॥५५॥
बाहन बिबिध प्रकार सु उत्तम बिसद बिमाना ।
बिपुल भाँति प्रासाद अटारी महल महाना ॥५५॥
मनहर सुन्दर चीर फेन सम स्वच्छ असतरन ।
सुधा सरिस प्रिय मधुर असन चित को न सुख करन ॥५७॥
ब्यंजन रुचिर अनेक परम रुचि प्रद रस नाना ।
सकल स्वाद सम्पन्न सुखद सुचि सुभग महाना ॥५८॥
बापी कूप अनूप बिपुल वाटिका बिहँग गन ।
बोलत बोल रसाल अमित मन हरन ललित तन ॥६०॥

ऋच्छ सुकपि व्याघ्रादि बिपुल पशु पलित कलित वर ।
क्रीड़न साज समाज सुखद सब बिधि मंजुल तर ॥६१॥
बहु बिधि अस्त्र सु शस्त्र चित्त रंजक आख्याना ।
गूढ़ रहस प्रद शास्त्र वेद संहिता पुराना ॥६२॥
नृत्य गीत वाद्यति भोग बहु भाँति सुरुचि कर ।
आज्ञा बर्ति सु वाम दिव्य अनगनित मोद घर ॥६३॥
अपर अनेक बिनोद हास्य करता प्रिय भ्राता ।
सखा सनेही स्वजन सकल सुख कर मुद दाता ॥६४॥
भानुवंश अवतंश अनेकन बालक बृन्दा ।
योग मार्ग मधि निपुण तपस्वी अति स्वच्छन्दा ॥६५॥
आज्ञावर्ती दास दासि सब सभा समाजा ।
अवधपुरी छबि भरी चक्रवर्ती महराजा ॥६६॥
पुण्य पयोनिधि रूप राशि वात्सल्य सिन्धु सम ।
जननी बिपुल सु प्यार पगीं अतिसय उदार तम ॥६७॥
नगर निवासी अमित महाँजन बहु व्यापारी ।
पुर बासी सब प्रजा राम को परम पियारी ॥६८॥
सब से भये उदास श्याम सुन्दर रघुनन्दन ।
पगे प्रिया के प्यार प्रेम पूरक रस रंजन ॥५९॥
कबहुँ मूक ज्यों बैठि ध्यान रत होहिं रसिक वर ।
कहुँ उन्मत्त समान परम चंचल बनि मुद भर ॥७०॥
गावन लगत सुगीत मधुर रस रंग समाये ।
कबहुँ मुर्छि महिं परत देह की सुरति भुलाये ॥७१॥

बहुरि उठत भरि मोद कहत हा प्राण पियारी।
कहाँ छिपी मैथिली मंजु मूरति मन हारी ॥७२॥
बिन कारण रिसियाय कबहुँ दासन पर खीझत।
बहुरि तुरत करि प्यार तिनहिं तोषन अति रीझत ॥७३॥
कबहुँ विपुल भरि भाव हृदय बहु विप्र बुलाई।
देत दान सुख सदन नृपति सुत श्री रघुराई ॥७४॥
कबहुँ बैठि एकान्त ध्यान में मगन अधिक तर।
पावत परम प्रमोद प्रेम पागे प्रभु छवि धर ।.७५॥
लखि इमि दशा विचित्र सकल पुरजन पुर वासी।
विपुल मातु अरु पिता सखा भ्राता सब दासी ॥७६॥
सब अति ब्याकुल भये किये उपचार अपारा।
प्रेम रोग तन लगेउ चलेउ नहिं केहु कर चारा ॥७७॥
औषधि बिबिध प्रकार मंत्र पढ़ि पढ़ि कोइ झारै।
त्रण तोरत वलि जात सुराईलोन उतारैं ॥७८॥
करि करि निज कर्तव्य सकल हारे दुखपाई।
नित नव बाढ़त रोग निरखि नृप अति अकुलाई ॥७९॥
यहि अवसर क्या करौं बिचारत निजमन माहीं।
कवन रोग अस प्रवल जाहि कोइ जानत नाहीं ॥८०॥
अर्द्धात्मा निज नित्य शक्ति मिथिलेश कुमारी।
तासु मिलन की चाह प्रबल की व्यथा सुरारी ॥८१॥
श्री मैथिली सँयोग बिना नहिं दर्द मिटाई।
यह पीड़ा अति असह बढ़ै दिन दिन अधिकाई ॥८२॥

औषधि अमल अनेक नेक नहिं लाभ जनावै।
श्री मैथिली वियोग विरह सब अंग जरावै ।।८३।।
यथा प्रलय के समय रूद्र को कोप महाना।
करि न सकै कोउ समन जरावै सकल जहाना ।।८४।।
तथा प्रवल विरहाग्नि माहि नित जरत रसिकवर।
यद्यपि परम समर्थ तदपि बेचैन मोद घर ।।८५।।
चक्रवर्ति अवधेश निरखि रघुवीर उदासी।
अन्ध वधिर उन्मत्त सदृश जड़वत सुख रासी।८६।।
श्री कौशिल्या आदि मातु सब परम दुखारी।
तब नृप भेजि सुमंत बुलायो गुरुहिं हँकारी ।।८७।।
विद्या मंत्र प्रवीण निकर मुनिवर तहँ आये।
श्री वशिष्ठ मुनिराज सबनि संतोष बँधाये ।।८८।।
नृपति पूजि गुरु चरण सकल मुनिवर सनमाने।
द्विजन दियो बहु द्रव्य नमित शिर परम सयाने ।।८९।।
विनय कीन कर जोर सुनहु सब मुनि जन बृन्दा।
श्रीगुरु देव उदार सर्व समरथ सुख कन्दा ।।९०।।
सब मिलि कीजै कृपा स्वस्थ होवैं रघुनन्दन।
पावहिं परम प्रमोद करैं गुरु जन पद वन्दन ।।९१।।
सुनि नृप के वर बचन सकल मिलि कीन उपाई।
मूर्छा दूर न भई उठे नहिं श्री रघुराई ।।९२।।
थके यत्न करि विप्र निकर मुनिवर समुदाई।
स्वस्थ भये नहिं लाल रसिक मणि जन सुखदाई ।।९३।।

तब विप्रन धरि ध्यान सकल कारण पहिचाना।
सुतप निरत द्विज निकर परम सर्वज्ञ सुजाना ॥९४॥
किन्तु व्यथा को हेतु द्विजन नहिं नृपहिं सुनायो।
परम हास्य पद रहस समुझि मन माहिं दुरायो ॥९५॥
विप्रन कियो बिचार सुनत नृप हँसिहैं भारी।
हास्य करहिं गे सखा बन्धु सब पुर नारी ॥९६॥
कहिहैं स्वजन समाज महाँकामी रघुनन्दन।
बिकल ब्याहहित होत सुनत सकुचहिं जग वन्दन ॥९७॥
विप्रन से नृप कहेउ शान्ति कर करहु उपाई।
स्वयं गये श्री रंगदेव मन्दिर अतुराई ॥९८॥
पूजन कीन्ह सप्रेम जोरि कर बिनय सुनाई।
कीजै कृपा कृपालु कटै संकट दुख दाई ॥९९॥
रघुनन्दन की व्यथा मिटै अस कृपा करीजै।
"सीताशरण" सुजान सुखद मागे मोहिं दीजै ॥१००॥

दो०– पुनि सोये नृप भवन मधि, देखा स्वप्न रसाल।
कहत कान लगि बचन मम, प्रियश्री रंग कृपाल ॥२॥

हे राजन तव सुवन भुवन भूषन सुख रूपा।

जनक नन्दिनी संग होय गो इन कर ब्याहा ।
जनि कीजै नृप सोच विश्वमधि भरै उछाहा ॥ ४ ॥
नृप तुम्हरे सुत चारि चारि फल सरिस उदारा ।
सकल जगत अधार रूपनिधि अति सुकुमारा ॥ ५ ॥
तिमि मिथिलाधिप सदन माहिं रस रूप उजारी ।
पुत्रीं चारि पवित्रशील गुण निधि छविधारी ॥ ६ ॥
सुन्दरि सुठि सुकुमारि कला कुशला मृदु बैनी ।
सुख सुषमा आगार सरल मृदुचित मृगनैनी ॥ ७ ॥
तिन कन्यन के साथ नृपति सम्बन्ध सुखारी ।
होइहै चारों सुतन केर जनि होउ दुखारी ॥ ८ ॥
सुनि इमि सुखद पुनीत परम प्रिय रसमय बानी ।
पाय आतमानन्द मगन नृप मन सुख मानी ॥ ९ ॥
इधर पुत्र बत्सला मातु रघुबरहिं निहारी ।
श्री कौशिल्या जननि हृदय पायो दुख भारी ॥१०॥
रुदन करहिं बहुभाँति सखिन मिलि अति समझायो ।
तदपि न गयेउ कलेश हृदय मधि शोक समायो ॥११॥
तेहि छण सुत प्रिय करन हेतु बहु विप्र बुलाई ।
दियो दान सनमान सहित अति विनय सुनाई ॥१२॥
माता की कोइ सखी कहा यहि भाँति बुझाई ।
वीणा धर एक विप्र पधारो जहँ रघुराई ॥१३॥
वाने बहु उपदेश दियो तबहीं से रघुवर ।
भये परम उन्मत्त बने पागल सब सुख कर ॥१४॥

यह सुनि जिय घबराय मातु अति सय दुख पागीं।
जानि देव ऋषि चरित करन निन्दा तब लागीं ॥१५॥
करुणा पूरित नैन विकल हिय में दुख भारी।
भये दुखारी सकल नगर बासी नर नारी ॥१६॥
कौशिल्या एक पुत्रवती अस गुनि सब लोगा।
होति विदीरण हृदय निरखि रघुवर को रोगा ॥१७॥
अतिसय वृद्धा मातु हृदय में परम दुखारी।
बोलहिं मिलि नर नारि भलीबिधि बात बिगारी ॥१८॥
लखि दुखमय अति दीन सबहिं प्रभु परम सुजाना।
आशुतोष जन सुखद कृपानिधि शिव भगवाना ॥१९॥
विश्वामित्र मुनीश ज्ञान गुण धाम महाना।
दीन प्रेरणा तिनहिं स्वप्न मधि शम्भु सुजाना ॥२०॥
जाहु आप श्री अवध नृपति से दोइ सुत मागी।
लावहु वेगि लिवाय आपने मख हित लागी ॥२१॥
श्री मिथिला पहुँचाय मिलावहु जनक दुलारी।
उनके विषम वियोग दुखी अति प्रभु धनु धारी ॥२२॥
मम प्रदत्त सब अस्त्र शस्त्र विद्या समुदाई।
रामहिं देहु मुनीश हृदय में आनँद पाई ।२३॥
कीजै अब न बिलम्ब होय जग सुयश तुमारा।
अचल कीर्ति तब रहे सत्य यह बचन हमारा ॥२४॥
स्वप्न मध्य अस कहेउ मुनीसन शम्भु उदारा।
मुनि शिव आयसु मानि बचन दृढ़ करि उर धारा ॥२५॥

प्रात होत मुनिराज ज्ञान घन अति तेजस्वी ।
प्रभु अर्चन करि चले मोद मन परम तपस्वी ।२६॥
लैइहौं दृगफल आज कृपानिधि बदन निहारी ।
अस उर में अभिलाष लखौं कब अवध बिहारी ॥२७॥
मन में करत बिचार गये श्री अवध मुनीशा ।
श्री दशरथ महाराज जहाँ पर लसत महीपा ॥२८॥
परम रम्यता भरीपुरी अनुपम छबि खानी ।
करि सरयू स्नान मुदित मुनिवर विज्ञानी ॥२९॥
गये नृपति दरबार नरेशहिं खबरि जनाई ।
सुनि मुनिवर आगमन मुदित मन अति हर्षाई ॥३०॥
करि स्वागत लै गये दिव्य आसन पधराई ।
पूजन करि बहु भाँति बहुरि वर विनय सुनाई ॥३१॥
केहि कारण आगमन नाथ कहिए जन जानी ।
सबबिधि पूरण काम आप मुनिवर विज्ञानी ॥३२॥
बोले मुनि मुसुकाय प्रतिज्ञा करहु नरेशा ।
पुनि मागौं सोदेहु होय जनि हृदय कलेशा ॥३३॥
नृपति प्रतिज्ञा कीन नाथ रूचि जो कछु तुमरी ।
सो मागहु तजि सकुच देहुँ सम्पति नहिं हमरी ॥३४॥
यह तब कृपा प्रसाद सकल मैं दास तिहारो ।
सुनि नृप बचन विनीत सरस प्रिय बैन उचारो ॥३५॥
मैं बन बसि तप करौं देत खल कष्ट महाना ।
[illegible] ॥३६॥

मैं चाहौं मख करन निशाचर करैं विध्वंशा ।
रक्षण हित दोउ बन्धु देहु रबि कुल अवतंशा ॥३७॥
सीय स्वयंवर चरित लीन मुनि राज छिपाई ।
निमि कुल रबिकुल एक ब्याह नहिं उचित कहाई ॥३८॥
मख राखन के ब्याज राम को मुनिवर ज्ञानी ।
चाहत मिथिला जान जहाँ रघुबर सुख दानी ॥३९॥
श्री मिथिलाधिप लली जानकी अवनि कुमारी ।
जिनहिं लागि बेचैन रहत रघुवर धनुधारी ॥४०॥
महा भाग्य की मूर्ति नृपति मिथिलेश उदारा ।
श्री विदेह योगीश सरस चित बिमल बिचारा ॥४१॥
श्री रघुनन्दन रूप रत्न अनमोल दिखाई ।
देन चहत सुख स्वाद नरेशहिं मुनि उमगाई ॥४२॥
कहत सूत मुनिराज सुनहु शौनक मुनि वृन्दा ।
भाग्यवान पहँ जाय मिलत ऐश्वर्य अनन्दा ॥४३॥
श्री रघुवर अनमोल रत्न सम सुखद रसाला ।
परम सुकृत तप पुंज महीपति जनक नृपाला ॥४४॥
होय समागम सीय संग सोचत रघुनन्दन ।
मन चाहत उड़ि जाय मिलौं आतुर जगवन्दन ॥४५॥
पुनि मिथलेश महीप अहैं प्रिय भक्त हमारे ।
दै तिन को निज दर्श करन हित परम सुखारे ॥४६॥
नृप कुमार सुकुमार चहैं मिथिला पुर जावन ।
परमान्द पुनीत प्रेम प्रेमिन दर्शावन ॥४७॥

श्री शिव सुखद सुजान स्वप्न मधि आज्ञा दीनी ।
मुनिवर विश्वामित्र मुदित मन शिर धरि लीनी ॥४८॥
याही से मुनिराज नृपति सों रघुवर मागत ।
सुनि महीश अकुलात बचन शुचि सर सम लागत ॥४९॥
प्रेम बिबस अति विकल कण्ठ मधि आये प्राना ।
अश्रु पूर्ण युग नयन चयन नृप केर भुलाना ॥५०॥
तदपि परम धरि धीर राव मुनि पद शिर नाई ।
बोले बचन बिनीत जोरि कर हे मुनिराई ॥५१॥
अर्थ लागि सब लोग जगत में त्यागत प्राना ।
याते हे मुनिराज अपर नहिं अर्थ समाना ॥५२॥
लेत और के प्राण अर्थ लगि जीव अभागी ।
श्रद्धायुत बहु अर्थ देउँ मैं अति बड़भागी ॥५३॥
यदि कीजै स्वीकार आप तो राज सिंहासन ।
देहुँ रहित संकोच नहीं चिन्ता कछु मम मन ॥५४॥
प्रभु तुमार पद कंज मंजु सर्वस्व हमारे ।
अर्पण करौं सप्रेम लेहु मुनि राज सुखारे ॥५५॥
महाँ शुद्ध मम राज पिताने मो कहँ दीना ।
प्रभु की सेवा जानि नाथ मैं शिर धरि लीना ॥५६॥
नाहिन मोहिं आशक्ति राज की हे मुनिराई ।
त्रण समान जग मोहिं लगत बिन श्री रघुराई ॥५७॥
देखे बिन रघुवीर रहैं नहिं प्राण हमारे ।
याते रक्षा करहु गहौं पद कंज तिहारे ॥५८॥

जरै सकल सुख साज राम बिन मैं नहि चाहौं ।
सब बिधि पावन प्रेम सतत सब भाँति निबाहौं ।।५९।।
त्यागि सकल धन धाम राज रखि अंक राम को ।
राजिवलोचन लाल विना मेरे न काम को ।।६०।।
लखि इन को बिधु बदन राज बिन सब सुख पैहहौं ।
विना रघुवर मुख कंज लखे दुख पुंज समैइहौं ।।६१।।
राज बिन सुख सहित जिऔं बिन राम न प्राना ।
सत्य सत्य मम बचन सुनहु मुनिराज सुजाना ।।६२।।
प्रथम बहुत सज्जनन राज तजि प्राण बचाये ।
आत्म सुरक्षा कीन मुदित मन दिवस बिताये ।।६३।।
याते हे मुनिराज सकल धन धान्य हमारा ।
कीजै प्रभु स्वीकार अहौं मैं दास तुमारा ।।६४।।
निज शरीर पर्यन्त सकल सम्पति सुख साजा ।
सब कछु अर्पण करौं एक नाहिन रघुराजा ।।६५।।
मम कुमार सुकुमार अखिल जग आश्रय दाता ।
मेरे प्राणाधार सतत सज्जन जन त्राता ।।६६।।
हितोपदेष्टा परम सुगुरु मैं रामहिं मानौं ।
निज अव्यय सब साज सतत रघुवीरहिं जानौं ।।६७।
उभय लोक गतिराम मोर रघुराज हमारे ।
अक्षय अमल अनूप परम रस रूप उजारे ।।६८।।
कहौं कहाँ तक नाथ मातु पितु बन्धु हमारे ।
धाता परम सुपुत्र अहैं रघुवर मम प्यारे ।।६९।।

राजा सखा सु स्वामि सु प्रभु एकै रघुनन्दन ।
भुक्ति मुक्ति ममराम काम पूरक अभिनन्दन ॥७०॥
परम धाम मोहिंराम लोक अरु वेदन माहीं ।
परम प्रसिद्ध परेश मोर रघुवर सम नाहीं ॥७१॥
जहाँ लगे जग बस्तु सकल रघुवीर हमारे ।
मैं सब तजि लै राम पाइहौं मोद अपारे ॥७२॥
निज प्रतिभा अरु बुद्धि सकल मैं जानौ रामहिं ।
सुख सुषमा आगार शील शोभा गुण धामहिं ॥७३॥
यदि देवौं मैं राम सून्य मो कहँ सन्सारा ।
राम रहैं सक जाय मिलै पुनि मोहिं सहारा ॥७४॥
राम मातु कौशिला एक रामहिं जाकी गति ।
सो रघुवीर बियोग माहिं किमि जियै विमल मति ॥७५॥
सुधा सरिस प्रिय मधुर मंजु मूरति रघुनन्दन ।
उनहिं त्यागि नहिं जिऔं करौं याते पद वन्दन ॥७६॥
दीजै जीवन दान मोहिं मुनिराज सुजाना ।
परम समर्थ उदार नाथ तुम कृपा निधाना ॥७७॥
रघुवर बिरह वियोग पाय सब लोक दुखारी ।
बिपुल अश्रु की धार भूमि नहिं सकै सँवारी ॥७८॥
वात्सल्य रस प्रेम भरी वाणी कहि राजा ।
मुनि को लखि कछु रुष्ट गये रनिवास समाजा ॥७९।
संग गये मुनि नाथ उठी रघुवर सिय माता ।
बन्दन करि पद कज बचन बोलीं बिलपाता ॥८०॥

हे मुनीश हम सकल अवध बासिन दुखदाई।
जनि तुम बनो तुषार कहौं तव पद शिर नाई ॥८१॥
रघुकुल कमल समान याहि हिम बनि न जराओ।
मुनिवर परम प्रवीन दया अपने उर लाओ ॥८२॥
जैसे पाला परत कमल बन जात सुखाई।
तथा अवध तजि राम जात लखि हे मुनि राई ॥८३॥
होवैंगे अति दुखित सकल पुरजन परिवारा।
याते कीजै दया आप मुनि राज उदारा ॥८४॥
हम सब अतिसय दीन प्राण की भिक्षा दीजै।
रामहिं सँग लै जान केर इच्छा नहिं कीजै ॥८५॥
शरणागत हम सकल रावरी हे मुनि राया।
मम प्राणन के प्राण राम गुनि कीजै दाया ॥८६॥
अपर आप सम एक महाँमुनि प्रथम सिधाये।
सुनि तिनको उपदेश देह की सुरति भुलाये ॥८७॥
खेद दशामय राम सतत उन्मत्त समाना।
प्राप्त रहत निशि दिवस हेतु कछु जाय न जाना ॥८८॥
कीनो बिपुल प्रयास यदपि विप्रन श्री गुरुवर।
तदपि स्वन की सखी सुसुप्ती सम श्री रघुवर ॥८९॥
रहत सदा वेचैन अपनपौ भूले लालन।
तपसिन से अति डरत कष्ट करि कीनो पालन ॥९०॥
रक्षा सुत की करहु नाथ मागौं कर जोरी।
चक्रपाणि भगवान आश पुरवत नित मोरी ॥९१॥

उनहीं की अति कृपा सतत हम सब सुख पावैं ।
रक्षक हमरे रहत कबहुँ दुख दोष न आवैं ॥९२॥
सुनि माता के बचन परम वात्सल्य समाने ।
मुनिवर मन सुख भयो प्रगट में अति रिसियाने ॥९३॥
बोले दृग करि लाल भृकुटि कर बंक बिशाला ।
क्या तुमने मद पान कियो कहु अवध नृपाला ॥९४॥
प्रथम कहा जो रुचै मागि लीजै हम देइहैं ।
तव मन की अभिलाष नाथ सब भाँति पुजैइहैं ॥९५॥
मैं मागेउ भावतो सुनत अति मोह दिखावत ।
करि अपनी चातुरी बिपुल बिधि बात बनावत ॥९६॥
जौं तब मन अति मोह प्रथम मागहु किमि कहेऊ ।
चक्रवर्ति महिपाल ज्ञान इतनेउ नहिं रहेऊ ॥९७॥
जो भावै सो करहु नृपति मैं भिक्षुक नाहीं ।
पर ऐसो नहिं उचित बिचरहु निज मन माहीं ॥९८॥
मेरो शील स्वभाव राव तुम नहिं पहिचानत ।
हम विरचेउ नव स्वर्ग भली विधि तुम सब जानत ॥९९॥
जो आनौ मन कोप सकल तव राज जरावौं ।
का जानौ मन माहिं बताओ क्यों न रिसावौं ॥१००॥

दो०–मुनिवर अवध भुबाल के, सुनि वर बचन वशिष्ठ ।
बोले विमल विवेक युत, शुचितर परम गरिष्ठ ॥३॥

इमि बहु बचन कठोर कहत मुनिवर खिसियाई ।
"सीताशरण" सनेह सने नृप सुनत डराई ॥ १ ॥

हे मुनिराज प्रवीण आप सब भाँति उदारा।
तव प्रभाव बिस्तार वरणि को पावै पारा ॥ २ ॥
ये नृप नित तव दास कोप इन पर नहिं कीजै।
ग्रहाशक्त परिवार निरत निज मन मुनि लीजै ॥ ३ ॥
सुन्दर सुठि सुकुमार पुत्र वर इन ने पाये।
तुमरी कृपा कटाक्ष सतत बहु लाड़ लड़ाये ॥ ४ ॥
याते अति वात्सल्य भरो इनके मन माहीं।
अस अपने मन सोचि क्रोध को कारज नाहीं। ५ ॥
इमि मुनि को समुझाय बहुरि नृप को सुख दानी।
बोले श्री गुरुदेव मधुर बानी रस सानी ॥ ६ ॥
सुनहु अवध महिपाल बचन मेरो सुख मानी।
देहु मुनींशहिं राम नहीं इनकी कछु हानी ॥ ७ ॥
ये समर्थ मुनिराज अमित तप इन ने कीना।
इनको अति हर्षाय ब्रह्म पद बिधि ने दीना ॥ ८ ॥
विद्या मंत्र सु अस्त्र शस्त्र शित्र दिये सुहावन।
ये दैइहैं रघुवीर काहिं तुमरेउ यश पावन ॥ ९ ॥
होइहैं त्रिभुवन माहिं सुनहु राजन मम बानी।
कीजै मन जनि सोच न कछु रघुवर की हानी ॥१०॥
तुमरे सुत अनुरूप परम लोनी सुकुमारी।
दुलहिन दिहैं मिलाय लखन की रुचि अनुहारी ॥११॥
उत्तम कुल उद्भवा शील शोभा गुन खानी।
सुनि हर्षे पितु मातु मोद अपने उर आनी ॥१२॥

रामहिं निकट बुलाय स्वकर गहि नृप सुख पाई।
मुनिहिं धरायो हाथ बहुरि यों बिनय सुनाई ॥१३॥
हे मुनीश लो राम इनहिं निज सुत करि मानौ।
शीघ्र दीजिये दर्श मोहिं अपनो जन जानौ ॥१४॥
मुनिवर परम प्रसन्न पाय लक्ष्मण अरु रामहिं।
चले जात मन मुदित लखत सुषमा सुख धामहिं ॥१५॥
भक्ति सहित मुनि संग चले लक्ष्मण अरु रामा।
बन्दि विप्र गुरु मातु पिता पद मन अभिरामा ॥१६॥
अमित जन्म की पुण्य मातु पितु साथ पठाई।
रघुवर रक्षा हेतु नेम व्रत करत सिहाई ॥१७॥
अपनो मन अरु नयन राम के संग पठाये।
प्राण बिना जनु देह दशा यहि भाँति जनाये ॥१८॥
मन रघुवर के साथ करै को जग ब्यवहारा।
गुरु वशिष्ठ समुझाय यत्न करि उनहिं सँवारा ॥१९॥
तदपि न आवत चैन दृगन बरसत जल धारा।
विरह ब्यथा अति प्रवल वरणि को पावै पारा ॥२०॥
सो रस किंचित सकृत अजहुँ जाके उर आवै।
"सीताशरण" वियोग माहिं सो देस सुखावै ॥२१॥
मातु पिता कस जिये हमहिं यह अचरज भारी।
हमसे अधम अधीन सुरति करि होत दुखारी ॥२२॥
जिनको हिय शुचि सरस जाहि प्रभु प्राण समाना।
तिनकी "सीताशरण" दशा को करै बखाना ॥२३॥

गये लखन रघुवीर मार्ग में मुनि के संगा ।
दलि ताड़का सुबाहु हते खल दल रन रंगा ॥२४॥
पूरण भा मुनि यज्ञ लही विद्या सब रघुवर ।
पुनि मैथिली सनेह सुमिरि उत्कण्ठित छबि धर ॥२५॥
प्रवल मिलन की चाह जगी मिथिलेश लली की ।
रघुवर अर्धातमा परम प्रिय कमल कली की ॥२६॥
मिथिलाधिप को दूत गयो कौशिक मुनि पासा ।
दीन निमन्त्रण पत्र भयो मुनि हृदय हुलासा ॥२७॥
पढ़ि सु पत्र मिथिलेश लिखित रघुवरहिं सुनायो ।
सीय स्वयंवर सुनत मुदित प्रभु आनँद पायो ॥२८॥
बिपुल विचित्र विहार करन हारे रघुराई ।
विरचेउ वेष अनूप जाहि लखि मदन लुभाई ॥२९॥
मुनिवर के सँग चले अनुज युत श्री रघुनन्दन ।
आकर्षत सब वाम सुपथ मधि प्रभु जग वन्दन ॥३०॥
तिन को मन चित कर्षि लेत हँसि अपने साथा ।
करि कटाक्ष कमनीय चोरि दृग श्री रघुनाथा ॥३१॥
जात चले मुनि संग गये श्री मिथिला नगरी ।
ललित विपुल वर बाग विटप पर बेलि सु बगरी ॥३२॥
सुमन वाटिका कलित कूप सर सुषमा गारा ।
मन्दिर महल अनूप वरणि को पावै पारा ॥३३॥
विश्वामित्र मुनीश संग सुठि युगल कुमारा ।
आये सुनि मिथिलेश हृदय भा मोद अपारा ॥३४॥

राजकीय सब सौज साजि मुनि मिलन सिधाये।
करि सब बिधि सत्कार महल मधि बास दिबाये ॥३५॥
लखि रघुवर माधुरी मगन मन श्री मिथिलेशा।
सुधि बुधि गयेउ हिराय मुर्छि महि गिरेउ नरेशा ॥३६॥
रूप वाण से बिधेउ हृदय तन सुरति भुलानी।
ब्रह्मज्ञान रत रहे कहावत अति विज्ञानी ॥३७॥
करि रघुवर छबि पान आज भे सत्य बिदेहू।
पावा परम प्रमोद जगेउ मन में अति नेहू ॥३८॥
सोचत निजहिय माहिं धनुष चाहे किन टूटै।
अवसि मैथिली केर राम सँग नाता जूटै ॥३९॥
बिन तोरेउ शिव धनुष सिया रघुवर कर ब्याहा।
करिहौं यह जिय धरेउ पाइहौं परम उछाहा ॥४०॥
जब कछु भे प्रतिकस्थ मुनीसन विदा माग कर।
गवने अपने भवन हृदय में अति उमंग भर ॥४१॥
समय पाय पुनि रंग भूमि मधि जुरेउ समाजा।
आये सकल महीप सजे सब राज सुराजा ॥४२॥
शतानन्द को पठै जनक कौशिकहिं बुलायो।
आये सहित समाज सबन मन आनँद छायो ॥४३॥
लखि दोउ राज किशोर परम चित चोर मधुर तर।
एक टक निरखत सकल नारि नर रूप सुघर वर ॥४४॥

राजकुमारन सहित मुनिहिं आसन पधरायो ।
तब बन्दिन बुलवाय जनक निज प्रण सुन वायो ॥४६॥
धनुष उठावन हेत उठे सब नृपति मोद भर ।
कीन्हें विपुल प्रयास उठो नहिं तब लज्जित उर ॥४७॥
निज निज आसन जाय सकल बैठे सकुचाई ।
गुरुवर आज्ञा पाय उठे तब श्री रघुराई ॥४८॥
गये धनुष के निकट हृदय में सोचन लागे ।
राखौं प्राण नृप केर तोरि शिव धनु रस पागे ॥४९॥
लीनो धनुष उठाय तोरि युग खण्ड बनाये ।
गुनि शिव को अपमान यदपि मन में सकुचाये ॥५०॥
परम भक्त मिथिलेश भक्त वत्सल रघुनन्दन ।
नृप प्रण पूरण कीन धर्म पथ रत जगवन्दन ॥५१॥
यद्यपि शिव भगवान प्रलय के देव महाना ।
भक्त प्रेम परतन्त्र राम से भा अपमाना ॥५२॥
आश्रित पालक राम सतत सब दिन सब काला ।
राखत पन जन केर प्रेम पूरक रघुलाला ॥५३॥
निज अपयश किन होय भक्त को यश विस्तारत ।
"सीताशरण" सुजान शील निधि स्वजन उबारत ॥५४॥
पुनि मैथिली सप्रेम राम गल डारी माला ।
बर्षत देव प्रसून गाय बहु गान रसाला ॥५५॥
सखिन आरती कीन जनक तब दूत पठाये ।
ते गमने श्री अवध सकल सन्देश सुनाये ॥५६॥

चक्रवर्ति मन मुदित सजाई विपुल बराता ।
आये मिथिला धाम मिले हर्षित सब भ्राता ॥५७॥
मण्डप ललित बनाय वेद विधि ब्याह करायो ।
सीयराम सम्बन्ध निरखि जग आनँद छायो ॥५८॥
कोटि कोटि कन्दर्प दर्प हर सुषमा गारा ।
रूप शील गुण धाम राम सब जग आधारा ॥५९॥
सिय को पाणि गहाय साथ में अमित कुमारी ।
सकलशील गुण खानि परम रस रूप उजारी ॥६०॥
जनक राम को अर्पि दीन मणि रत्न अमित धन ।
आत्म समर्पण कीन हृदय हर्षित प्रमोद मन ॥६१॥
सर्वेश्वर रघुवीर जानि मिथिलेश सुजाना ।
दियो अमित धन धान्य कीन सब बिधि सनमाना ॥६२॥
उत्तम कुल उत्पन्न शील सुषमा गुण खानी ।
दईं अमित सुन्दरीं राम को अति सुख मानी ॥६३॥
जनक नन्दिनी सहित राम सँग सकल कुमारी ।
ब्याहीं वेद बिधान युक्त मिथिलेश सुखारी ॥६४॥
भरत लखन रिपुदवन केर बिधि सहित बिवहा ।
कियो मुदित मिथिलेश भाँति बहु भयेउ उछाहा ॥६५॥

बहुरि बरात समेत जनक पूजे अवधेशा।
करि सत्कार अपार बिपुल सुख दियो नरेशा ॥६८॥
करि वैदिक ब्यवहार सकल बिधि लौकिक रीती।
जनक कीन वर विनय जोरि कर परम सप्रीती ॥६९॥
हे अवधेश जनेश आज बड़ भाग्य हमारे।
जगत पूज्य श्रीमान आप के राज दुलारे ॥७०॥
मेरे पाहुन भये कौन मम भाग्य बखानै।
इनकी कृपा कटाक्ष कदा इनको कोइ जानै ॥७१॥
सर्व शक्ति शिर मौर जासु यश जगत मझारी।
पूरि रह्यो सब ओर नाम सीता सुकुमारी ॥७२॥
सो प्रसिद्ध मम सुता भईं मोहिं पिता बनायो।
सूर्यवंश नृप आप हमहिं सब बिधि अपनायो ॥७३॥
समधी मोहिं बनाय सकल बिधि दीन बड़ाई।
सकल सुरन के शिरोभाग पर हमहिं चढ़ाई ॥७४॥
पर रघुवर सौन्दर्य रूप माधुरी पान कर।
तृप्त न भे मम नयन प्यार नहिं कियो मोद भर ॥७५॥
वात्सल्य सुख स्वाद भली बिधि मैं नहिं पायो।
एक यही बड़ सोच नाथ मोरे मन छायो ॥७६॥
मैं मागौं कर जोरि कृपा ऐसी अब कीजै।
रहैं यहाँ रघुवीर काल कछुआज्ञा दीजै ॥७७॥
मिथिला बासिन केर मनोरथ पूरण करि के।
जावैं पुनि श्री अवध हमनि अति आनँद भरि के ॥७८॥

मन वान्छित सुख देहिं सबै सब भाँति कुँवर वर।
तृप्त करैं हम इनहिं सरस सुठि भोग अर्पि कर ॥७९॥
केवल मैं नहिं कहौं सकल सासू अस चाहैं।
कछु दिन श्री रघुवीर दर्श दै नेह निबाहैं ॥८०॥
सकुचे उत्तर देत कछुक श्री अबध नरेशा।
बोलेउ तब तक बहुरि जोरि कर श्री मिथिलेशा ॥८१॥
यदि सौचौ महिपाल सकल परिवार हमारा।
सब को प्रिय श्री राम करत सब प्यार अपारा ॥८२॥
यहाँ न इतनो प्यार होय रघुनाथ कुँवर को।
तो ऐसी नहिं बात को न चाहै छबि धर को ॥८३॥
मैं समेत परिवार प्यार इनको अति करिहौं।
निरखि बिमल बिधु बदन बचन सुनि उर सुख भरिहौं ॥८४॥
याते हे अवधेश अवसि आज्ञा दै दीजै।
जानि हमनि अति दीन मनोरथ पूरण कीजै ॥८५॥
सुनि वर बचन विनीत विहँसि बोले अवधेशा।
होहिं मनोरथ पूर्ण धीर धरिये मिथिलेशा ॥८६॥
रघुवर बिषम वियोग बिकल सन्तप्त दुखारी।
सकल मातु परिवार अवध बासी नर नारी ॥८७॥
याते मानो बात अवध को जावन दीजै।
पुर बासिन समुझाय देहिं सुख कृपा करिजै ॥८८॥
पुनि बीते कछु काल राम को यहाँ पठैइहैं।
निज जिय निश्चय करो शीघ्र रघुनन्दन अइहैं ॥८९॥

अस कहि बधुन समेत सुतन सँग अवध महीपा ।
कियो मुदित प्रस्थान गये निज नगर समीपा ॥६०॥
मातन बधुन समेत हर्षि सब कुँवर उतारे ।
परिछन करि लै गईं महल मधि जाय बिठारे ॥६१॥
करि सब लौकिक रीति द्विजन दीनो बहु दाना ।
यहि बिधि "सीताशरण" ब्याह सन्छेप बखाना ॥६२॥
करहिं बधुन बहु प्यार सासु सब अति रस पागीं ।
पावहिं परमानन्द मातु सब अति बड़ भागीं ॥६३॥
बधुन सहित लखि सुतन लहैं जो सुख सब माता ।
सो सुख "सीताशरण" बरणि पावैं न बिधाता ॥६४॥
परिजन पुरजन प्रजा परम प्रेमामृत पागी ।
सब की श्रीरघुवीर चरण पंकज मति लागी ॥६५॥
यहि बिधि परमानन्द मगन सब राज समाजा ।
करि सब को अति सुखी प्रेम पालक रघुराजा ॥६६॥
लागत मास अषाढ़ मुदित पितु आयसु पाई ।
श्री मिथलापुर गये सियायुत श्री रघुराई ॥६७॥
नगर निवासिन सहित जनक आदर अति कीना ।
सुन्दर सुखद सुपास महल मधि आसन दीना ॥६८॥
श्री मैथिली प्रमोद करन रस रमन राम को ।
मातु सुनयना प्रेम पगीं लखि कृपा धाम को ॥६९॥
सरस मिष्ट सुठि सुखद मधुर रमणीय सुहावन ।
अन्न परम स्निग्ध सुभग रुचि प्रद अति पावन ॥१००॥

षटरस ब्यंजन बिबिधि भाँति पकवान बनावैं ।
स्वकर सनेह समाय श्याम सुन्दरहिं पवावैं ॥१०१॥
मन हर मूर्ति ललाम रूप माधुरी पान कर ।
पावहिं परमानन्द प्रेम पूरित अति सय उर ॥१०२॥
चक्रवर्ति नृप सुवन भुवन सुख प्रद मनभावन ।
सासु करन से पाय स्वाद बरणत जग पावन ॥१०३॥
पाय सुअवसर परम रूप गुण शील सयानी ।
सुठि सुन्दरी अनेक दिव्य तर अति छवि खानी ॥१०४॥
राजकुँवारी अमित आय रघुनन्दन पासा ।
मृगनयनी पिक बैनि हृदय भरि परम हुलासा ॥१०५॥
गान कला कल कुशल सकल बिधु बदनी बाला ।
गावहिं गारी कलित मधुर रमणीय रसाला ॥१०६॥
लखि तिनकी चातुरी सुनत गारी मन हारी ।
पावहिं परम प्रमोद हृदय मधि श्री धनुधारी ॥१०७॥
पूरक पावन प्रेम प्रणत प्रति पालन हारे ।
ऊपर से सकुचात कछुक अवधेश दुलारे ॥१०८॥
सखि जन गारी देत आप उत्तर नहिं देवत ।
सुनत परम सुख स्वाद भरे अतिसय रस लेवत ॥१०९॥
लखि रामहिं संकुचित मोद भरि मातु सुनयना ।
सब बालन को डाँटि सरस प्रिय बोली वयना ॥११०॥
ऐ सब बाला वृन्द अधिक जनि दीजै गारी ।
प्रिय पाहुन रघुबीर ललन मन सकुचत भारी ॥१११॥

दो०-श्री अवनिजा विदेहजा, जीवन प्राण अधार।
सीताशरण सनेह बस, सखि नत रहे निहार॥४॥

माता दै दै सपथ अलिन को रोकत आहीं।
तदपि परम चंचला हृदय मधि अति हर्षाहीं॥१॥
गावैं गारी मुदित अम्ब को कहा न मानत।
बोले सूत सुजान सुनहु शौनक हम जानत॥२॥
भानुवंश राकेश अमल यश वर्धन हारे।
रघुनन्दन मन हरन मधुर तर अवध दुलारे॥३॥
श्री मिथिलाधिप ललिन केर गारी मन हारी।
सहस सुधा ते सरस जानि सुनि रास विहारी॥४॥
पावत जो सुख स्वाद स्वप्न मधि कबहुँ न पायो।
वेद ऋचन को पाठ विपुल विधि मुनिन सुनायो॥५॥
आप अनन्त अनाम अमल अनवद्य अनूपा।
व्यापक व्याप्य विभूति अनघ सत्‌चित् नर रूपा॥६॥
तुमरेहि प्रबल प्रताप तपत रवि शशि दिन राती।
पवन अग्नि जम काल मृत्यु तुमते भय खाती॥७॥
तुम स्वतन्त्र परमीश ज्ञान गुण खान उदारा।
अज अनीह अखिलेश कृपा निधि जगत अधारा॥८॥
इमि वरणन मुनि करत सुनत तुम होत सुखारी।
पर अस सुख नहिं होत भयेउ जस सुनि रस गारी॥९॥
सुनि गारी मन हरन प्रेम रस भरीं मधुर तर।
पायो परमानन्द नेह ग्राहक भाविक वर॥१०॥

बोलीं सुठि सुन्दरीं सुनहु हे राज दुलारे।
सुनेउँ महापुरुषत्त्व हीन हैं पिता तिहारे ॥११॥
जो होतेउ पुरुषत्ववान क्यों देव मनाई।
यन्त्रित करि तब मातु काहिं सुठि खीर खवाई ॥१२॥
तब तुम पैदा भये लाल हम सब भल जानत।
और बहुत भी दोष हमहिं का विश्व बखानत ॥१३॥
तब कुल में लखि दोष शान्ता बहिन तुमारी।
नहिं केहु राजकुमार वरीं ऋषि संग पधारी ॥१४॥
परम बिवश लाचार भये जब पिता तुमारे।
सौंप दईं ऋषि काहिं हृदय महँ मोद अपारे ॥१५॥
औरौ अटपट बहुत कहाँ लागि कहौं सुनाई।
तब कुल की करतूति ललन सिगरे जग छाई ॥१६॥
सुनि तिनके वर बयन अयन सुख स्वाद सामने।
परम प्रेम रस मोद पगे राघव मुसुकाने ॥१७॥
तव जो कर्म सु धर्म क्रिया मख जप तप ध्याना।
भिन्न भिन्न गुण सुखद सतत जिन को प्रभु माना ॥१८॥
तिन में जो सुख भयो सबनि ते सुख अधिकाई।
पावत राज किशोर प्रेम रस निधि रघुराई ॥१९॥
उनकी परम सनेह सनी गारी मनहारी।
सुनि अतिसय सुख पगे प्रेम पूरक धनुधारी ॥२०॥
आत्म लाभ गुनि परम रसिक बर अति सुख मानत।
"सीताशरण" सुजान स्वजन हिय की पहिचानत ॥२१॥

तब वे बाल रसाल सकल बोलीं मुसुकाई।
सुनहुँ लाल मन हरन प्रेम लम्पट रघुराई ॥२२॥
अब हम सब करि कृपा अधिक संकोच न दैइहैं।
निज कुल कीरति सुनत लजत अब हम न सुनैइहैं ॥२३॥
कहि इमि बचन बिनोद बलित सुरभित जल पावन।
रघुवर को अचवाय प्रेम पूरित मन भावन ॥२४॥
सरस सुगन्धन सहित पाय ताम्बूल सु छविधर।
चर्वण करि सुख पगे भाव ग्राहक सनेह घर ॥२५॥
वात्सल्य रस पगीं सुनयना मातु सयानी।
निज सु अंक पधराय राम को अति सुख मानी ॥२६॥
कहा सयन अब करहु ललन आनन्द समाने।
लखि तिनको शुचि भाव राम मन मोद अघाने ॥२७॥
वात्सल्य रस दान मातु की अंक शीश धरि।
सोये राजकिशोर परम चितचोर प्रेम भरि ॥२८॥
वाही समय सनेह सने मिथिलेश सिधाये।
लखि रघुवर माधुरी हृदय में अति हर्षाये ॥२९॥
वाम भाग रघुवीर दाहिने सियहिं बिठाई।
निज सु अंक पधराय नृपति मन मोद समाई ॥३०॥
निकट प्रेम रस पगीं सुनयना सु छबि निहारैं।
युगल माधुरी निरखि दोउन पर तन मन वारैं ॥३१॥
निज अर्द्धांगिनि ओर चितय नृप परम सुखारी।
पावत परमानन्द सरस प्रिय गिरा उचारी ॥३२॥

अहो देवि बहु सु व्रत याग तप तीर्थ अपारा।
संयम नियम विवेक विनय दम दया उदारा ॥३३॥
जग मैत्री वर नीति सु गुरु हरि पद सुचि प्रेमा।
सब विधि "सीताशरण" कहे जो श्रुति में नेमा।।३४॥
प्रभु पद प्रीति पुनीत भजन भावना सुकर्मा।
आगम निगम पुराण मध्य जो, जो शुभ धर्मा ॥३५॥
सो हम सबने किये अनेकन जन्म मझारी।
वाको सुफल स्वरूप मिले सिय युत धनुधारी ॥३६॥
हम सबमो बहु सुकृत समागम यह कर वायो।
सिय रघुवीर बिबाह भयो सब को मन भायो ॥३७॥
बड़ भागी हम सकल दृगन भरि दर्शन पायो।
इन दोउ को सम्बन्ध पाय मम यश जग छायो ॥३८॥
मोसम सुकृती कौन राम जेहि के जामाता।
मम कन्या मैथिली सिया इन की तुम माता ॥३९॥
सिय रघुवर माधुरी युगल लखि दृग फल पाई।
यह अमृत सुख सरिस मोक्ष नहिं मोहिं लखाई ॥४०॥
सुर पुर में जो सुधा नहीं समता में याके।
पुण्य क्षीण ही होत पतत सुर पियतहु जाके ॥४१॥
यह सिय रघुवर युगल सु छबि रस जो जन छाके।
मिटत तासु मद मार मोह मन होत न ताके ॥४२॥
याते यह छबि सुधा अमल सब भाँति अनूपम्।
हम दोउ को अति सुखद सतत रस प्रेम स्वरूपम् ॥४३॥

परब्रह्म को ज्ञान भक्ति शुभ कर्म धर्मवर ।
जो हम पालन किये हृदय में अति उमंग भर ॥४४॥
वाके परम प्रभाव नष्ट भे पाप हमारे ।
अब जागे मम भाग मिले तव राज दुलारे ॥४५॥
पाप पुंज अति प्रवल रहत चेतन के जबलौं ।
मिलत न "सीताशरण" सिया रघुनन्दन तबलौं ॥४६॥
कृपा करैं सियाराम सकल अघ पुन्ज नशावैं ।
तब उपजै सुचि प्रेम मोद मन मार न भावैं ॥४७॥
छूटैं जग सम्बन्ध देह के सब ब्यवहारा ।
होय स्वभाविक क्रिया लहै चित शान्ति अपारा ॥४८॥
तब लागै सम्बन्ध सिया रघुवर पद पावन ।
सूक्ष्म बासना मिटै मिलैं तब प्रभु मन भावन ॥४९॥
याते बिन सिय राम कृआ दर्शन नहिं होई ।
"सीताशरण" प्रयास करै बहु बिधि किन कोई ॥५०॥
यहि बिधि सने सनेह करत निज भाग्य बड़ाई ।
श्री मिथिलाधिप नृपति सिया रघुवरहिं सिहाई ॥५१॥
वात्सल्य रस मगन युगल जोड़ी अभिरामा ।
आशिर्वाद अनेक दिये सुख प्रद मुद धामा ॥५२॥
राजभोग बहुवाँति पदारथ दिव्य अनूपम् ।
बैभव वलित बिशेष बिबुध दुर्लभ सुख रूपम् ॥५३॥
दम्पति सीताराम काहिं अर्पे मिथिलेशा ।
आत्मवोध सम्पन्न हृदय अति सरस नरेशा ॥५४॥

सोइ ज्ञानी जानिये सिया रघुवर को पाई।
निज सर्वस दे सौंपि करै सेवा मन लाई ॥५५॥
जोरि सुदृढ़ सम्बन्ध युगल माधुरी पान करि।
पावै परमानन्द हृदय में अति उमंग भरि ॥५६॥
श्री विदेह योगीश महाज्ञानी गुन रासी।
कमल पत्र इव रहत जगत से सदा उदासी ॥५७॥
यहि बिधि श्री मिथिलेश सुनयना सीता रामहिं।
सब बिधि लालन कीन युगल सुषमा सुख धामहिं ॥५८॥
तब गमने मिथिलेश सुनयना आनँद पाई।
सीताराम स्वरूप युगल निज हृदय बसाई ॥५९॥
आईं तहँ वर वाम बिमल बिधु बदनी बाला।
बिपुल विभूषण बसन सुगन्धित सजे रसाला ॥६०॥
अंग अंग मनहरन कान्ति कमनीय हीय हर।
सुषमानिधि सौन्दर्य परम रमणीय सुघर वर ॥६१॥
रसमय मूर्ति उदार निरखि रघुराज कुँवर को।
बाल जाल रस प्रेम पगीं लखि लखि छबिधर को ॥६२॥

हे सौन्दर्य सु सिन्धु प्रश्न को उत्तर दीजै ।
प्रिय पाहुन चितचोर कृपा इतनी अब कीजै ॥६६॥
कोई पुरुष सुकार्य करत अपने सुख लागी ।
परमारथ लगि करत कार्य जो जन बड़ भागी ॥६७॥
कछु नर अपर सुखार्थ करत जग में बहु काला ।
इन तीनो को भेद बतावहु तुम रघुराजा ॥५८॥
तुम जानत सब भाँति श्रेष्ठ परमार्थ कहावै ।
करै जो कोइ परमार्थ जगत में यस सुख पावै ॥६९॥
याते हे रसिकेश रास रस रमण सु छबि धर ।
पूर्ण मनोरथ करहु हमनि के शुचि सनेह घर ॥७०॥
रति रस लम्पट लाल छयल छबिधाम गुणाकर ।
तुम परमार्थ स्वरूप प्रेम पालक उदार तर ॥७१॥
करि कटाच्छ कमनीय कला कौशल दिखलाई ।
मम मन मृग को लीन आप छबि जाल फसाई ॥७२॥
बहुरि बिचार सुदच्छ आप एक बात बताइय ।
केहि गुण भूपहिं कहत जगत राजा समझाइय ॥७३॥
अमित भोग नृप पास कहत राजा यहि लागी ।
सकल भोग में प्रमुख एक बनिता रस पागी ॥७४॥
तुम रघुराज किशोर परम रसबोर हृदय हर ।
देहु हमनि सुख स्वाद आप सब बिधि प्रमोद घर ॥७५॥
कौन कर्म जग किये दशा साफल्य कहावै ।
पुनि वैफल्य कहाय कर्म सो कौन बुझावै ॥७६॥

सकल भोग जग केर भोगि पुनि सुन्दर नारी ।
संग करै रति रमण होइ साफल्य सुखारी ॥७७॥
भोगत हू सब भोग करै नहिं बनिता संगा ।
सो बैफल्य कहाय लहै सो किमि रस रंगा ॥७८॥
याते क्यों वैफल्य करत अपने को रघुवर ।
लीजै परमानन्द हमनि के अंग संग कर ॥७९॥
पुनि हे चतुर सुजान कहो अक्रि अर्थ धर्म को ।
कौन साध्य फल होत आप जानत सुमर्म को ॥८०॥
धर्म अर्थ को लाल काम किमि दूषित करई ।
चार पदारथ मध्य काम गणना क्यों परई ॥८१॥
अर्थ धर्म के अछत काम को जो नहिं सेवत ।
तिनके दोनो विफल स्वाद सुख कदा न लेवत ॥८२॥
धर्म धुरन्धर आप नृपति सुत अर्थ अपारा ।
याते सेबहु काम हमनि सँग परम उदारा ॥८३॥
न तरु सुनहु रघुवीर युगल बैफल्य तुम्हारे ।
होवैं गे हृदयेश मानिये बचन हमारे ॥८४॥
आत्म स्वरूपा मुक्ति कौन कहिये रघुनन्दन ।
तुम सब भाँति सुजान प्रेम पूरक जग वन्दन ॥८५॥
तस्य बिरोधी काम कवन विधि कहो सुघर वर ।
आप परम रमणीय मूर्ति रसमय सुशील तर ॥८६॥
आत्म सुखहिं अनुभवै काम तेहि निकट न जावै ।
जो कोइ भोगै काम आत्म चिन्तन न सुहावै ॥८७॥

युगल विरोधी धर्म आप कैसे निरवाहत।
आत्म सु चिन्तन करत परम प्रेमीजन ध्यावत ॥८८॥
यौवन रत्न सुभार्य आप यह हमहिं बतावैं।
सेवन करै सु अर्थ पुरुष वह समय बुझावै ॥८९॥
पुनः कौन से काल माहिं नर धर्महिं सेवै।
फिरि कब सेवै काम सरस जीवन फल लेवै ॥९०॥
पाहुन अस्मिन काल अवस्था सरस तिहारी।
कीजै रास बिहार मोद प्रद अवध बिहारी ॥९१॥
युवति वृन्द मधि रत्न सरिस मैथिली हमरी।
रूप शील रस खानि बनी भार्या तुमारी ॥९२॥
लखि उनको मुख चन्द्र आत्म चिंतन करि पैइहो।
पगि अनुराग अपार सकल जग सुरति भुलैइहो ॥९३॥
हे बलबानन मध्य महाँ वलवान उदारा।
कहिये राजकुमार आप अति सरस बिचारा ॥९४॥
धर्मादिक के मध्य साध्य फल कौन कहावै।
परम सुमंगल रूप जाहि सारो जग ध्यावै ॥९५॥
अर्थ धर्म के मध्य काम ही परम साध्य फल।
तब याते क्यों डरत आप रसिकेश कहो भल ॥९६॥
नहीं नपुंसक आप परम वलवान कहावत।
हे सुन्दर मुख ललन हृदय मधि क्यों सकुचावत ॥९७॥
और कहो रघुवीर रूप को क्या उपभोगा।
सेवन करै न काम व्यर्थ मानै सब लोगा ॥९८॥

रूप सार्थक तबहिं ललति ललना गण संगा।
रमि रमाय सब भाँति करै अनुभव रस रंगा ॥९९॥
याते हे चितचोर चपल चूड़ा मणि छबिधर।
देहु हमनि आलिंगनादि सुख स्वाद मोद भर ॥१००॥
भवितव्यता न होन देत यों बात बनाई।
जो बोलौ रसिकेश सुनो तो मन चित लाई ॥१०१॥
वीर शिरोमणि आप कहिय अस को बलवाना।
करै जो "सीताशरण" दैव से युद्ध महाना ॥१०२॥

दो०—कौन पुरुष से हार कर, दैवहु होत हतास।
सीताशरण बताइये, पाइय हृदय हुलास ॥५॥

कामी दैवहिं जीति बिजय पावत बरियाई।
वीर शिरोमणि आप दैव से डरत वृथाई ॥ १ ॥
कौन भोग को भोगि सुशोभित होवति नारी।
पुरुष कौन सो भोग भोगि अति होत सुखारी ॥ २ ॥
बनिता किस के लिए बनी नर केहि सुख लागी।
कहिये राज किशोर आप रघुवंश अदागी ॥ ३ ॥
केवल पुरुषहिं सुखद नारि बिधि बिरचि बनाई।
नारि सुखद ही पुरुष रच्यो बिधि ने हर्षाई ॥ ४ ॥
करि बनिता सँग योग पुरुष अति ही सुख पावत।
सुखी होत तब नारि पुरुष अगन लपटावत ॥ ५ ॥
पुरुषहिं केवल नारि नारि को पुरुष सुखद अति।
नतरु सुभग दोउ व्यर्थ वदत बुध परम बिमल मति ॥ ६ ॥

अखिल अवनि के ईश अवध पति तस्य कुमारा ।
रूप शील गुण खानि सरस शुचि परम उदारा ॥ ७ ॥
याते तुम को लाल अहर्निशि ललनन संगा ।
उचित सु विपुल विहार सरस रति रमण प्रसंगा ॥ ८ ॥
कौन पुरुष जो देत अपर को आपन पापा ।
को अपनी दै पुण्य हरत औरन सन्तापा ॥ ९ ॥
जेहि सँग नर अपकार करत सो निज अघ देवत ।
करत जासु उपकार पुण्य वाकी हरि लेवत ॥१०॥
गाढ़ालिंगन देइ करो उपकार हमारो ।
रमि रमाय सुख स्वाद देहु संकोच न धारो ॥११॥
होवैं हम सब सुखी आपनी पुण्य पुन्ज वर ।
अर्पण तुम को करैं सुनौ रस निधि प्रमोद घर ॥१२॥
जो पै सुन्दर श्याम हमनि सुख स्वाद न दैइहो ।
तो निश्चय रसिकेश दोष हम सब को पैइहो ॥१३॥
अस जनि कीजे लाल आप मृदुचित करुणाकर ।
प्रेमिन प्राणाधार प्रेम पूरक उदार तर ॥१४॥
हम सब तुम्हरी चरण शरण आईं रघुनन्दन ।
दीजै परमानन्द भाव ग्राहक जग वन्दन ॥१५॥
कहिये राज कुमार दया है किस को नामा ।
कौन कहावत रत्त्य कहिय रघुवर सुख धामा ॥१६॥
कौन सु शक्ति समर्थ कवन कीरति जग पावन ।
कहिये राजिव नयन चयन प्रद अतिमन भावन ॥१७॥

अतिसय दुखी विलोकि द्रवै अतिसय हिय जाको।
सब बिधि रचा करै कहैं सब रक्तक वाको ॥१८॥
सोई परम दयालु दुखी जन रच कहावै।
बही समर्थ सु शक्ति सतत एक रस रहि आवै ॥१९॥
घटै नहीं जो कदा और को देइ घटाई।
वही समर्थ सु कीर्ति सदा उज्वल दिखलाई ॥२०॥
त्रिभुवन करै प्रकाश मलिनता कबहुँ न आवै।
"सीताशरण" समर्थ सु कीरति सोइ कहलावै ॥२१॥
अस्तु परम हम दीन दुखी तब अंगालिंगन।
चाहैं प्रमुदित देहु कृपा करि रँगि रस रंगन ॥२२॥
सब प्रकार हम रच्य आप रक्तक सब लायक।
परम उदार समर्थ शक्ति युत श्री रघुनायक ॥२३॥
जो पै पूरण काम काम हर कामद छविधर।
करैं सुखी हम सबनि देहिं सुख स्वाद मुदित वर ॥२४॥
अचल सु कीर्ति समर्थ करै जग माहिं प्रकाशा।
विनवौं बारम्बार करहु पूरण मम आशा ॥२५॥
इमि वर बचन विनोद वलित बोलीं सब बाला।
आसय अति गम्भीर गूढ़ तर मधुर रसाला ॥२६॥
श्रुति सम जिन को ज्ञान परम पावन मन हरनी।
सकल कला कल कुशल पतिव्रत रत शुचि करनी ॥२७॥
सुनि तिन के वर बचन रचन आनन्द अघाने।
सकल शास्त्र श्रुति विज्ञ राम कछु मृदु मुसुकाने ॥२८॥

पुनि सोचत रघुवीर प्रश्न इन के अति रूरे।
अर्थ धर्म अरु मोक्ष नहीं केवल मद पूरे ॥२६॥
प्रवल प्रेम की प्यास काम पूरित सब अंगन।
तजि लज्जा संकोच चहैं रँगना रस रंगन ॥३०॥
केवल काम कलोल करन हित ये मृग नयनी।
निज चतुरता दिखाय रहीं सब बिधि पिक बयनी ॥३१॥
महाँ गोप्य रस भरित ललित इनकी वर बानी।
अस बिचारि चुप रहे कछुक क्षण सारँग पानी ॥३२॥
सहज सकोची राम परम अभिराम काम हर।
अतिसय मन सकुचाय बचन बोले प्रमोद कर ॥३३॥
तुम सबके जो प्रश्न तिनहिं मैं जानौ नीके।
जो हम उत्तर देहिं लगैं तुम को अति फीके ॥३४॥
सुनि ताली दै हँसीं सकल ललना समुदाई।
बोली लाल रसाल दीन उत्तर सुख दाई ॥३५॥
इमि करि हास बिलाश सखी सब सुभग सयानी।
परमानन्द प्रमोद पगीं रामहिं सुख दानी ॥३६॥
केवल वाल विनोद भरी इनकी वर बानी।
"सीताशरण" न लेश बिषय की गन्ध समानी ॥३७॥
ये सिय की अनुचरीं परम सुख देन राम को।
गमनी यूथ बनाय सकल निज निज सुधाम को ॥३८॥
पुरवासिन की बधू सकल निज यूथ बनाई।
आईं महल मझार लखे दृग भरि रघुराई ॥३९॥

रूप अनूप अपार मार मद मर्दन मन हर।
सुन्दर श्याम सुजान सरस आजानु बाहु वर ॥४०॥
नवल अमल कल कमल सरिस लोचन अरुणारे।
चपल चतुर चितचोर मन्द हँसि हेरन हारे ॥४१॥
तिन सो भरि अनुराग सकल नायिका नवेलीं।
निज सम्बन्ध विचारि बचन बोलीं अलबेलीं ॥४२॥
हे राजेन्द्र कुमार आप सौन्दर्य सिन्धु सम।
लोकोत्तर गुणवान परम अभिराम अनूपम ॥४३॥
तुम्हरो रूप निहारि सकल जग आनँद पावै।
उत्सव बिबिध प्रकार करत मन मोद बढ़ावै ॥४४॥
यद्यपि ऐसे आप तदपि सुनिये रघुनन्दन।
मम मैथिली बिशेष रूप रस सब सुख कन्दन ॥४५॥
करि कटाक्ष कमनीय तुमहिं जिन ने अपनायो।
सब बिधि "सीताशरण" आप को मान बढ़ायो ॥४६॥
नतरु आप को रूप ब्यर्थ हो तो रघुराई।
अपर भोक्ता कवन कहिय संकोच विहाई ॥४७॥
जो मिथिलाधिप लली आप से रूप उजागरि।
रसमय मूरति मंजु मधुर सुषमा गुण आगरि ॥४८॥
विमल वंश अवतंश मृदुल चित सब सुख ऐनी।
आश्रित पालक सतत सुखद अतिसअ मृदु वैनी ॥४९॥
अब हे सभ्य सु लभ्य यही निश्चय हम करहीं।
"सीताशरण" विचारि हृदय में आनँद भरहीं ॥५०॥

सज्जन सभा मझार प्रशंसित कीर्ति तुम्हारी।
सकलशोक संताप समन कारक अघहारी ॥५१॥
भव्य सु पुरुषन हृदय मध्य करि बिमल प्रकाशा।
होवैगी अति सुखद करनि सब बिधि दुख नाशा ॥५२॥
मम मैथिली अनूप लड़ैती जनक किशोरी।
सुन्दरता की मूर्ति विमल चन्द्रहु से गौरी ॥५३॥
तिन ते भयो सखित्व आप को हे रघुनायक।
यह तव कीर्ति प्रसार माहिं अति होहिं सहायक ॥५४॥
हे अवनीश कुमार आप की कीर्ति बिसद वर।
भुवन चतुर्दश मध्यहोय सब को अति सुख कर ॥५५॥
हे अम्भोरुह नयन अखिल लोकेन्द्र सुवन वर।
सब बिधि पूरण काम परम अभिराम मोद घर ॥५६॥
भूमि नन्दिनी संग पाय तव भाग्य अपारा।
बढ़ कर भयो असीम सीम को पावन हारा ॥५७॥
ऐसो क्यों नहिं होय हमारी राज दुलारी।
जासु चरण नख केर ललन महिमा अतिभारी ॥५८॥
नख उच्छिष्ट प्रभाव अमित ब्रह्माण्ड प्रगट कर।
भरत सकल सुख स्वाद अकथ अनुपम उदार तर ॥५९॥
को ऐसी गुण वती लोक मधि सीय समाना।
अयोनिजा मैथिली भूमि तनया जग जाना ॥६०॥
जाके सम नहिं अपर अधिक क्यों कर कोइ होई।
जो कोइ बनै समान भुवन त्रय निन्दित सोई ॥६१॥

सो दुख रूपा अवसि जगत में यश नहिं पावै ।
"सीताशरण" उदार विसद कीरति फहरावै ॥६२॥
यद्यपि हे नृप लाल आप की पुरी सुहावन ।
रही परम सुख धाम सुरन मन मोद बढ़ावन ॥६३॥
तदपि मैथिली चरण कमल को लहि संयोग वर ।
भई परम अभिराम सदन सब बिधि प्रमोद कर ॥६४॥
अब यह नाम सअर्थ अयोध्या भो सब भाँती ।
महिमा अकथ अपार वरणि नाहिन कहि जाती ॥६५॥
करि न सकै कोइ युद्ध अयोध्या याते नामा ।
पूरित परमानन्द प्रेम प्रद अति अभिरामा ॥६६॥
अब इन को संयोग पाय नित नवल उछाहू ।
रासादिक अति सरस होहिं सुख प्रद सब काहू ॥६७॥
अब लखि अवध अनन्द स्वर्ग सुख तुच्छ दिखाई ।
सुरन हृदय अभिलाष परम पर सकत न पाई ॥६८॥
श्री निमिवंश पयोधि माहिं प्रगटीं वैदेही ।
सकल सुलक्षण शीलमयी अति सुखद सनेही ॥६९॥
पूरन चन्द्र समान मैथिली जनक दुलारी ।
पुत्र वधू लहि तिनहिं वंश तव शोभित भारी ॥७०॥
यथा निशामधि लसत व्योम बिच बिमल सुधाकर ।
तथा मैथिली मिले भयो तव वंश उजागर ॥७१॥
परम अलंकृत भयो सिया से वंश तिहारो ।
यह ममबानी सत्य आप हू हृदय बिचारो ॥७२॥

अब तव वंश प्रभाव स्वर्ग को तुच्छ बनायो ।
स्वर्ग निवासी सुरन केर अति गर्व घटायो ॥७३॥
सुर अस सोचत रहे हमारो लोक महाना ।
यहि सम नहिं ऐश्वर्य स्वाद सुख विदित जहाना ॥७४॥
अब ब्रह्मादिक पूज्य मैथिली सिय को पाई ।
अतिसय बिलसित भयो अवध पुर अतिछबि छाई ॥७५॥
महिमा भई अपार पार कहि के को पावै ।
बैभव वलित बिलोकि बिबुध पुर अति सकुचावै ॥७६॥
लज्जित अतिसय देव अवध सम्पति अवलोकी ।
सकल प्रजा सुख रूप सर्वदा परम अशोकी ॥७७॥
और कहाँ तक कहौं रची विधि सृष्टि सुहाई ।
पाहुन बिनु मैथिली सकल अति व्यर्थ जनाई ॥७८॥
दारिद अनल विदग्ध सरिस सी परति दिखाई ।
कृपा सुधा बर्षिणी सिया प्रगटतीं न आई ॥७९॥
इमि वर बचन विनोद भरे चातुर्य्य समाये ।
सत्य परम रस सने सुनत रघुवर सुख पाये ॥८०॥
पुरुषोत्तम नृप सुवन भुवन भूषन सुषमाकर ।
हँसत राम मुख मोरि सखिन चितचोरि सु छबिधर ॥८१॥
वे सब नव नायिका नेह भरि निरखि राम तन ।
गावहिं गान रसाल लाल सुनि होत मुदित मन ॥८२॥
पावत परमानन्द प्रेम पूरित परमीशा ।
वन्दत "सीताशरण" जासु पद बिधि हरि ईशा ॥८३॥

सुनि तिन के वर वयन सार ग्राही रघुराई ।
हँसि बोलत तुम ठीक कही सजनी मन भाई ॥८४॥
सर्व रसाश्रित राम श्याम सुन्दर सुशील तर ।
पूरक पावन प्रेम प्यार पागे प्रतिभा कर ॥८५॥
पुनि कहि बचन रसाल लाल हँसि हँसि विनोद करि ।
मधुर सरस अति सुफुल सुमन वर माल मोद भरि ॥८६॥
सुठि सुगन्धमय अतर सु मणि मुक्तत की माला ।
भूषण बसन अनूप सुखद विरचित छबिजाला ॥८७॥
चक्रवर्ति नृप कुँवर सबनि को निज कर दीनी ।
दूलह सु छबि अपार सखिन उर बिच धरि लीनी ॥८८॥
पर वे बाम ललाम पाय अनमोल बिभूषण ।
बसन ललित मन हरन अमल नित नव हत दूषण ॥८९॥
भईं नहीं सन्तुष्ट सदा रघुवर छबि प्यासी ।
दूलह मुख माधुरी पान करि लहि सुख रासी ॥९०॥
प्रेम पियासे नयन चयन सिय वर लखि पावैं ।
तिन कहँ "सीताशरण" अखिल ऐश्वर्य न भावैं ॥९१॥
सकल लोक अभिराम राम मन हरन मधुर तर ।
रूप अनूप अपार मार मद मथन सु छबिधर ॥९२॥
लखि तिनको शर्देन्दु बिमल वर बदन सुखारी ।
भयो सबहिं सन्तोष हर्षि प्रिय गिरा उचारी ॥९३॥
हे अवधेश किशोर परम चित चोर सलोने ।
स्वजन सुखद सद सुयश अमित रतिपति मद खोने ॥९४॥

लालन करो बिचार आप अपने मन माहीं।
यह श्री मिथिलापुरी दरिद्रा एकौ नाहीं ॥६५॥
मणि माणिक अरु रत्न यहाँ सब लोग लुटावत।
चक्रवर्ति नृप सुवन आप सोइ हमहिं दिखावत ॥६६॥
हे पाहुन रस रमन रसिक रस दान सुघर वर।
हम सब चाहत यही लखौं तव छवि नित दृग भर ॥६७॥
अपर जगत के भोग स्वाद सुख हमहिं न भावैं।
कीजै ऐसी कृपा संतत हम सब सोइ पावैं ॥६८॥
तव स्वरूप माधुरी सु रस नित हम सब पीवैं।
त्यागौं "सीताशरण" विभव तव मुख लखि जीवैं ॥६९॥
पुनि आनन्द समुद्र मगन पुर की सब नारी।
लखि लखि 'सीताशरण' सिया छबि परम सुखारी ॥१००॥

दो०–प्राणाधिक प्रिय हमनि की, सकल रूप रस सार।
श्री मैथिली सनेह घर, मृदुचित परम उदार ॥६॥

तिन को भाग्य महान मिले जिन को पिय रघुवर।
"सीताशरण" सनेह शील रस रूप सुभग तर ॥ १ ॥
दायक परमानन्द अमल अनवद्य गुणाकर।
सब विधि "सीताशरण" मधुर मनहर सुषमाघर ॥ २ ॥
ऐसो रूप अनूप कबहुँ हम सुन्यों न देखेउँ।
जैसो श्री मैथिली प्राण वल्लभ तन पेखेउँ ॥ ३ ॥
करहिं मनोरथ नेह भरीं नव निकर नागरीं।
रूप शील गुण खानि परम रस निधि उजागरीं ॥ ४ ॥

श्री रघुबर को दर्श कीन अनुराग समेता ।
पूजीं श्री गिरिराज सुता अति मोद सचेता ॥ ५ ॥
दोउ को सुफल रसाल एक ही वे सब चाहैं ।
मिलै मैथिली चरण सेव नव नेह निवाहैं ॥ ६ ॥
अखिल लोक अभिराम राम दर्शन फल पावन ।
सिय पद सेवा मिलै जिनहिं सेवत मन भावन ॥ ७ ॥
तैसे ही श्री पार्वती पूजे पद पंकज ।
अवनि सुता पद प्रीति मिलन जेहि भजत शंभु अज ॥ ८ ॥
यहि से सब भामिनी भली बिधि हृदय बिचारैं ।
करि सेवा पद पद्म लली के तन मन वारैं ॥ ९ ॥
जब तक श्री रघुवंश हंस अवतंश ज्ञान घन ।
श्री मिथिला में रहे राम अति सय प्रसन्न मन ॥१०॥
तब तक सब पुर बधू सकल गृह काज बिसारी ।
प्रिय पाहुन रस रूप माधुरी पियहिं सुखारी ॥११॥
रूपोत्सव रघुवीर केर इमि आनन्द दीना ।
मिथिला पुर नव बधुन सर्वथा निज बस कीना ॥१२॥
बदली बुद्धि बिशेष लाज तजि सकल कामिनी ।
गुरुजन को भय त्यागि राम रस रूप भामिनी ॥१३॥
पागीं अति अनुराग राग जग केर भुलाई ।
मन बुधि चित अरु नयन राम छबि गई समाई ॥१४॥
मन्द मन्द हँसि हेरि लाल मृदु बचन सुनाई ।
श्री मिथिलापुर बधुन लीन अति स्वबस बनाई ॥१५॥

लोक लाज कुल कानि तबहिं तक बन्धन डारै।
जौ लौं "सीताशरण" राम मुख छबि न निहारै ॥१६॥
जिन निरखी भरि नयन रसिक मणि मधुर सुमूरति।
बिसरति "सीताशरण" नहीं वाको सुठि सूरति ॥१७॥
वाके हिय अरु दृगन मध्य झलकत सोइ झाँकी।
सकृतहुँ "सीताशरण" लखी जिन छबि वर बाँकी ॥१८॥
इन मिथिलापुर बधुन बहुत दिन रघुवर संगा।
कीनो हास विलाश लहेउ सब गिधि रस रंगा ॥१९॥
तब उनकी अस दशा भई कछु अचरज नाहीं।
जो पै "सीताशरण" बिचारो निज मन माहीं ॥२०॥
एक दिवस एकान्त महल मधि सोये रघुवर।
आईं वाला वृन्द बिपुल हिय में उमंग भर ॥२१॥
मन में कीन विचार श्वसुर गृह में रघुराई।
आये सब सुख दान करौं क्रीड़ा मन भाई ॥२२॥
इनके भूषन बसन लेहिं हम सकल चुराई।
मिलि सब करिहैं हास लाल मन मोद बढ़ाई ॥२३॥
अस निज हृदय बिचारि बिभूषन बसन चुराई।
युगल चरण में चटक महाँवर दीन लगाई ॥२४॥
चंचल चपला सरिस वाल वर वृन्द सु अंजन।
आँजन चाहत नयन जगे तब तक रघुनन्दन ॥२५॥
पुण्य मयी सुचि भूमि माहिं हीरा अंकुर सम।
अखिल जीव अभिराम चित्त रंजक अति अनुपम ॥२६॥

वर्धक शुभ उद्गार जगे गुनि सुभग सयानी।
यत्र यत्र भगि गईं रूप गुण गण छबि खानी ॥२७॥
तेहि क्षण सो वर भवन भरेउ मंजीर स्वरन सों।
पुनि आईं कछु काल गये हँसि हेरि दृगन सों ॥२८॥
मृदु करताल बजाय गईं प्रिय पाहुन पासा।
रघुवर मुख छबि हेरि खड़ीं मन परम हुलासा ॥२९॥
लखि उनकी चातुरी चतुर चूड़ा मणि रघुवर।
हँसि बोले वर वयन अयन सुख स्वाद मुदित वर ॥३०॥
यद्यपि तुम सब वाल अबहिं अति कोमल बदनी।
किन्तु कठिन यह कर्म कहाँ सीखे छबि छवनी ॥३१॥
भूषन बसन चुराय मोर सब दीन छिपाई।
निन्दनीय कृत कियो कौन सुनि करै बड़ाई ॥३२॥
चंचलाक्षी वाल जाल हमने अब जानी।
जन्मी सब धन हीन घरन में तुम छबि खानी ॥३३॥
याही से मिलि सकल बिभूषन बसन चुराई।
तुम ने दिये छिपाय हँसे अस कहि रघुराई ॥३४॥
हमहिं न कछु परवाह नृपति अवधेश दुलारे।
अपर लिहैं बनवाय मोद मन होहिं तुमारे ॥३५॥
हम से कहती प्रथम स्वकर धन धान्य अपारा।
देते प्रेम समेत तुमहिं हम परम उदारा ॥३६॥
पर तुम चोरी कीन नहीं चिन्ता कछु हम को।
जो चाहो तुम सकल और देवैं हम तुम को ॥३७॥

सुनि इमि बचन बिनोद भरे रघुवंश कुँवर को ।
मृग नयनी वर वाल बिपुल लखि परम सुघर को ॥३८॥
हिरण्य नाभ श्रीराम श्याम सुन्दर सुशील तर ।
तिन सों अवसर पाय सकल बोलीं उमंग भर ॥३९॥
सुनहु छबीले छैल लाल रघुवंश दुलारे ।
हम पाई जो खबरि सुनाबैं तुमहिं सुखारे ॥४०॥
तुम्हरे माता पिता परस्पर बाद बढ़ाई ।
दोनो मन रिसियाय बात यहि भाँति चलाई ॥४१॥
बोले पिता तुम्हार ब्याह मैं दूसर करिहौं ।
तजि तुमको स्वच्छन्द मोद वाके उर भरिहौं ॥४२॥
बोलीं सुनि तब मातु करहु जो तब मनमाहीं ।
अपर सु पति मैं वरौं हमहिं कोइ रोकै नाहीं ॥४३॥
यहि बिधि बाढ़ेउ बाद पिता तब परम रिसाने ।
अपर ब्याह प्रारम्भ कियो मन सोचि सयाने ॥४४॥
यासे हे चित चोर चपल चूड़ा मणि छबिधर ।
आये पिता तुम्हार बिभूषण बसन भव्य तर ॥४५॥
लै गमने श्री अवध आप अब जनि पछिताइय ।
अति उदार तव श्वसुर तुरत पुनि दूसर पाइय ॥४६॥
प्रथम बिभूसन बसन दिये थे श्वसुर तुमारे ।
पुनि देइहैं बनवाय सोच तजिये नृप वारे ॥४७॥
तुमरे पितु के पास बसन भूषण अस नाहीं ।
याही से लै गये सोचि अपने मन माहीं ॥४८॥

जैसे भूषण बसन यहाँ पहिरत पुर बासी ।
ललचत तिन को देखि अपर भूपति सुख रासी ॥४९॥
सुत के श्वसुर उदार दिव्य अनमोल बसन वर ।
भूषन दिये अनूप परम मन हरन सुभग तर ॥५०॥
अस निज हृदय बिचारि आप के पिता सुजाना ।
लै भूषन वर बसन अवध पुर कीन पयाना ॥५१॥
आप न कीजै सोच श्वसुर तब रुष्ट न होइहैं ।
पहिले से अनमोल बसन भूषन पुनि दैइहैं ॥५२॥
सम्पति की नहिं कमी रत्न मणि मणिक मोती ।
भरे बिपुल भण्डार जगमगति तिन की ज्योती ॥५३॥
प्राणहुँ ते प्रिय तिनहिं आप सब भाँति रसिक वर ।
याते तजिये सोच ललन चित चोर चपल तर ॥५४॥
सुनि तिनके वर बचन रचन मन हरन मोद धर ।
बोले राजकिशोर सरस तर बचन प्रेम भर ॥५५॥
अहो बिशाल सु बोध मयी सब राज दुलारी ।
हम जानी तुम सकल चतुर वित चोरन हारी ॥५६॥
तुमरी बुद्धि बिशाल किन्तु यह अनुचित कर्मा ।
क्या तुम सब की मातु सिखायो यहि वर धर्मा ॥५७॥
निज निज माता पिता निकट अब पूछहु जाई ।
अनुचित चोरी कर्म तासु निर्णय कर बाई ॥५८॥
जस वे निर्णय करहिं कहो पुनि हम से आई ।
कहि अस बचन रसाल लाल विहँसत सुख पाई ॥५९॥

सुनि रघुवर के वयन अयन सुख सुधा समाने ।
बोलीं बचन बिनोद वलित अतिसय रस साने ॥६०॥
हे नृप लाल रसाल हमनि तुम काह बतावत ।
देखहु निज घर ओर बृथा क्यों बात बनावत ॥६१॥
लालन तुमरी भगिनि शान्ता अति सुकुमारी ।
सुचि सुठि सकल प्रकार रूप गुण शील उजारी ॥६२॥
कुल में दोष बिचारि वरीं नहिं राज कुमारन ।
कारण कवन बिशेष आप ही कहिये कारन ॥६३॥
तब सब बिधि हिय हारि आपके पिता चतुर वर ।
दीनीं ऋषि को सौंपि गई सो अति प्रमोद भर ॥६४॥
ऐसी पावन रीति आप के कुल मधि रघुवर ।
जानत 'सीताशरण' सकल हम सब हे छबि धर ॥६५॥
भये नृपति कल्माषपाद तुमरे कुल माहीं ।
तिनकी कीर्ति प्रसिद्ध जगत को जानत नाहीं ॥६६॥
ऐसेउ पुरुष अनेक भये तव वंश मझारी ।
अखिल भुवन विख्यात कहौं मैं क्या विस्तारी ॥६७॥
यद्यपि यह बहु दोष तदपि अब कौन बिचारा ।
श्री विदेहजा पाय बिमल भा वंश तुमारा ॥६८॥
मिथिलाधिप तव श्वसुर बने अब संसय नाहीं ।
भो उज्वल तव वंश विचारहु निज मन माहीं ॥६९॥
अब बाढ़ेउ तव तेज सुनहु रघुवीर धीर धुर ।
अस विचारि रसिकेश मोद भरिये अपने उर ॥७०॥

महाँ बृद्ध तब पिता नपुंसक सब जग जानत।
याहू पर नृप लाल बिपुल बिधि बात बनावत ॥७१॥
तव पितु के वर बाम बिपुल तद्यपि सुत नाहीं।
पैदा एकौ भयो हेतु सोचौ मन माहीं ॥७२॥
तब करि यज्ञ महान कीन बहु सुर अवराधन।
प्रगट भये तब आप ललन रस निधि मन भावन ॥७३॥
याते हे घन श्याम चतुर सब बिधि सुन्दर वर।
जो पै तत्त्व विचार करिय तो तुम प्रमोद घर ॥७४॥
चक्रवर्ति महराज केर सुत कहन न जोगू।
प्रगट बात जग माहिं याहि जानत सब लोगू ॥७५॥
परमोचित रघुवीर आप सुर सुत कहलाइय।
याते शंकर वर्ण भये या नहिं बतलाइय ॥७६॥
किन्तु अहो रसिकेश आप मन सोच न कीजै।
भो निमिकुल सम्बन्ध हृदय में मोद भरीजै ॥७७॥
अति उत्तम से श्रेष्ठ भयो अब तुम सब लायक।
कीन मैथिली पाणि ग्रहण तुम ने रघुनायक ॥७८॥
धीर शिरोमणि भूमि ईश मिथिलेश सुजाना।
जिन निस्कसित किये शत्रु सब अति बलवाना ॥७९॥
तव कुल दूषन रूप शत्रु सो अवसि मिटाई।
दैइहैं मोद महान सोच तजिये रघुराई ॥८०॥
जब उनने निज सुता संग तव ब्याह रचायो।
कीनों कन्या दान तुमहिं जामान बनायो ॥८१॥

तो अस जानो लाल दोष थे तव कुल माहीं।
तिनको कीनों दूर रंच अब संसय नाहीं ॥८२॥
एक और भी बात सुनहु रघुराज कुँवर वर।
जैसे पृथ्वी आदि तत्त्व होवत अशुद्ध तर ॥८३॥
आन तत्त्व शांकर्य होत अपपित्र बनाई।
पुनि बीते बहु काल शुद्धता तेहि में आई ॥८४॥
वैसेहिं बीते काल वंश अरु वर्णहिं जानो।
तजि शांकर्य पवित्र होत श्रुति शास्त्र बखानो ॥८५॥
ऐसेहिं कारण पाय दोष युत वंश तिहारो।
लालन अब तक रहेउ आपने हृदय बिचारो ॥८६॥
अब निमिकुल सम्बन्ध भयो सब दोष मिटाने।
सुनि तिनके रस भरे बचन रघुवर मुसुकाने ॥८७॥
बोले सरस सनेह सने प्रिय बैन मधुर तर।
जेहि कुल में शांकर्य होहिं सोइ आन वित्त हर ॥८८॥
जो कोइ चोरी करै वाहि शंकर कुल जानो।
अपर न शंकर वर्ण होत निज मन अनुमानो ॥८९॥
जो क्षत्री कुल शुद्ध कदा चोरी नहिं करई।
यह निन्दित लघु कर्म किये भव निधि नर परई ॥९०॥
भला अबहिं तुम सकल सु लघु कन्या सुकुमारी।
सीखीं चोरी करब मोहिं अचरज अति भारी ॥९१॥
जहँ ऐसी लघु सुता वहाँ की युवा कुमारी।
कैसी चोरी करत होहिं को कहै बिचारी ॥९२॥

चोर मार्ग अति मन्द् हेय तर हेय महाना।
तुम सब चोरी करन सिखीं निज गुण अभिमाना ॥६३॥
प्रथम बिदित जो होत ब्याह हम यहाँ न करते।
जो करते तो अभय बसन भूषण नहिं धरते ॥६४॥
सोते सजग सचेत सतत अवसर नहिं देते।
आती चोरी करन वाहि हम कर गहिं लेते ॥६५॥
प्रथम रहा नहिं ज्ञान यहाँ सब चोर निबासा।
तो कबहूँ हम भूलि न आते तुमरे पासा ॥६६॥
इमि वर बचन बिनोद बलित बोले जब रघुवर।
सुनि सब सुठि सुन्दरीं वाल वय चपल मुदित उर ॥६७॥
परम प्रेम रस पगीं सकल शंका लज्जा हत।
चितय छवीले छयल ओर सब अति उमंग युत ॥६८॥
बोलीं हे नृप लाल भाल में यही तुमारे।
वरणौं "सीताशरण" सुनहु अवधेश दुलारे ॥६९॥
दो०-चोर पुराने तुम ललन, त्रिभुवन सुयश तुमार।
सीताशरण कहौं कछुक, सुनिये परम उदार ॥७॥
बलवानन के मध्य आप बलवान महाना।
पावन परम प्रभाव प्रगट जेहि सब जग जाना ॥ १ ॥
शिशु पन ते अब तलक आप ने हे सुन्दर वर।
कितनी चोरी करी वाहि कहिये सुजान तर ॥ २ ॥
बालक युवा सु बृद्ध सकल नर नारि प्रवीना।
सुनि मुनि चर अरु अचर चित्त तुम चोरि अधीना ॥ ३ ॥

सब को चित्त फसाय लियो छबि जाल बिछाई ।
कहिये "सीताशरण" चोर अस को रघुराई ॥ ४ ॥
जो ऋषि अतिसय बृद्ध जगत से परम उदासी ।
विषय बासन रहित राग ईर्षा सब नासी ॥ ५ ॥
तिनहुँ लखो रघुनन्द सकृत मुख चन्द तिहारो ।
भूलि गयीं सब क्रियाँ तुमहिं पर तन मन वारो ॥ ६ ॥
वाको कियो अनन्य आप ने हे रघुनन्दन ।
को ऐसो बलवान चोर कहिये जग वन्दन ॥ ७ ॥
तुमरो रूप अनूप सकृत जो झाँकत झाँकी ।
बिन गथ 'सीताशरण' बिकत लखि छबिवर बाँकी ॥ ८ ॥
वाको पुनि जग मध्य अपर कोइ प्रिय नहिं लागत ।
हे अनन्य जन सुखद सकृत तुम में अनुरागत ॥ ९ ॥
अपर अमित बलवान धैर्य वाले नर नारी ।
चोरेउ सब को चित्त चपलता करि अति भारी ॥१०॥
अहो चोर शिर मौर लखी हम तब चतुराई ।
निज अवगुणन छिपाय और को दोष लगाई ॥११॥
और सुनो रघुवीर आपनी अति सुठि करनी ।
कहत लगत संकोच जात नहिं मो पर वरनी ॥१२॥
हम सब बाला बृन्द बिपुल विधि निज गृह काजा ।
प्रथम रहीं नित करत लखे जब से रघुराजा ॥१३॥
पुनि तुम मृदु हँसि हेरि नयन की सयन चलाई ।
कहि प्रिय बयन रसाल लीन मन चित्त चुराई ॥१४॥

लोक लाज कुल कानि सोच संकोच मिटायो ।
सब से नेह छुड़ाय सबनि कहँ स्वबस बनायो ॥१५॥
ममगृह की सब क्रिया आपने दीन छुड़ाई ।
भूख प्यास भय नीद हरी तुम ने रघुराई ॥१६॥
जबते आये लाल जाल तुमने फैलायो ।
पुनि चोरी को दोष बृथा ही हमनि लगायो ॥१७॥
काम केलि कल कुशल जगत में जेते नामी ।
तिन मधि "सीताशरण" आप सब के वर स्वामी ॥१८॥
तिन के शिक्षक आप सबनि आचर्य प्रधाना ।
तब करनी जग बिदित सुनी हम सब निज काना ॥१९॥
महाँकोप मय रूप रेणुका पुत्र परशुधर ।
जड़वत कीनो आप उनहिं पल में मृदु हँस कर ॥२०॥
और श्रवण हम सुनी सुनहु पाहुन प्रिय छबिधर ।
मनोरमा पाषाण भस्म की रही रसिकवर ॥२१॥
वाको देखन मात्र आपने ललित भामिनी ।
दीनीं तुरत बनाय परम कमनीय कामिनी ॥२२॥
जो लखि तव छबिजाल भई वांच्छित प्रदायिनी ।

कहिये अब चितचोर चोर जगमें को तुम सम ।
सब की चोरी करी आप अतिसय उदार तम ॥२६॥
यहि बिधि हास्य बिनोद करैं सब राज कुमारी ।
"सीताशरण" सनेह भरे रघुवीर सुखारी ॥२७॥
सुनि सुनि परमानन्द मगन होवत रघुनन्दन ।
यद्यपि अमल अकाम काम नाशक जग वन्दन ॥२८॥
अज अनीह अनवद्य अगुन अनुपम अविनासी ।
परमानन्द परेश ज्ञान गुण निधि सुखरासी ॥२९॥
तदपि सखिन की प्रेम मयी रस मय मृदु गारी ।
सुनि अतिसय सुख लहत रसिकमणि अवध विहारी ॥३०॥
यह सुख स्वाद अनूप कदा पाहुन नहिं पायो ।
यद्यपि सकल मुनीश विपुल श्रुति पाठ सुनायो ॥३१॥
यह सब प्रेम प्रभाव प्रगट जग में सब जानत ।
याकी महिमा प्रवल साधु श्रुति शास्त्र बखानत ॥३२॥
निर्विशेष निर्लेप निखिल निगमागम गावत ।
परम प्रेम परतन्त्र होत सोउ सुख रस पावत ॥३३॥
यद्यपि श्री रघुवीर प्रेम रस सुख गुण सागर ।
परमानन्द स्वरूप रूप अनुपम नव नागर ॥३४॥
तदपि प्रेम परतन्त्र सतत सेवक सुख दाता ।
"सीताशरण" सनेह सिन्धु सब बिधि जन त्राता ॥३५॥
इत सब बाला वृन्द परस्पर पाहुन संगा ।
करहिं बिनोद विलाश रँगी अतिसय रस रंगा ॥३६॥

मातु सुनयना केर महाँ भय मन में मानै ।
तदपि चपल चित वाल जाल रसमय चितसानै ॥३७॥
तब बोली एक वाल सुनहु सब सखी सयानी ।
जो जानैंगी मातु होय तो अति हिय हानी ॥३८॥
डाँटि कहैंगी हमनि चंचला तुम सब वाला ।
परम धृष्टता कीन सरल चित श्री नृप लाला ॥३९॥
संकोची सब भाँति परम भोरे रघुनन्दन ।
यद्यपि अतिसय चपल चित्त पाहुन मन रंजन ॥४०॥
याते कोई युक्ति करो मिलि सकल सयानी ।
प्रिय पाहुनहिं बुझाय धरहु भूषन पट आनी ॥४१॥
तब बोली दूसरी सखी हे राजिव नयना ।
आय रहीं इस समय यहाँ श्री मातु सुनयना ॥४२॥
याते हे रसिकेश आप इतको उठि आइय ।
हम सब का सब भाँति मधुर प्रिय बैन सुनाइय ॥४३॥
सुठि सूधे सुकुमार चले उठि श्री रघुराई ।
तब कोइ सखी प्रवीण बसन भूषण लै आई ॥४४॥
प्रथम जहाँ से लये वहाँ धरि रघुवर पासा ।
आई परम सनेस सनी उर भरी हुलासा ॥४५॥
बोली मृदु मुसुकाय नहीं माता पग धारी ।
याते चलिये लाल वहाँ ही परम सुखारी ॥४६॥
सुनि तिन के प्रिय बैन गये तहँ पुनि श्री रघुवर ।
देखे भूषण बसन धरे सब वाल मोद भर ॥४७॥

हँसीं ठठाय विनोद मयी बोलीं प्रिय बानी।
वाह वाह रसिकेश कहो पाहुन सुख मानी ॥४८॥
आप बनत थे धनी हमनि को चोर बतावत।
प्रिय लालन अस कहत आप संकोच न पावत ॥४९॥
आप चोर शिरताज राजनन्दन सुकुमारे।
सुनिये राजकिशोर मधुर प्रिय बचन हमारे ॥५०॥
अस लागत मद मत्त ललन ये नयन तुम्हारे।
चीनत नहिं वर बसन बिभूषण रूप उजारे ॥५१॥
निज भूषण अरु बसन स्वयं जब आप न जानत।
व्यर्थहिं "सीताशरण" वाद बालन से ठानत ॥५२॥
तब मृदु हँसि रघुवीर बचन बोले रस साने।
बनिता माया प्रवल अहो जग में को जाने ॥५३॥
आदि पुरुष ने रची प्रथम जब सृष्टि सुहाई।
तब सब माया जाल तियन को दीन सिखाई ॥५४॥
याते वे लखि नवल पुरुष के संग रति चाहैं।
काम केलि कल कुशल हृदय में भरैं उछाहैं ॥५५॥
जो कोइ पुरुष प्रवीण काम क्रीड़ा नहिं करई।
तबहुँ तियन के जाल माहिं निश्चय सोउ परई ॥५६॥
सुनि अस रघुवर बचन मोद भरि सब सुकुमारी।
शिव वन्दित पद कंज मंजु श्री अवध बिहारी ॥५७॥
उन से सब सहचरी गूढ़ से गूढ़ हास्य कर।
अपर चहैं कछु करन परम रस पगीं प्रेम वश ॥५८॥

मातु सुनयना सुनेउ आज मिलि सकल कुमारी ।
श्री रघुवर के साथ धृष्टता कीनीं भारी ।।५९।।
करि बहु हास्य विनोद किये लज्जित रघुराई ।
वात्सल्य रस भरीं अम्ब आईं अतुराई ।६०।।
फटकारीं सब बाल प्रथम पुनि यों समुझाईं ।
सुठि सूधे रघुवीर करो जनि अधिक ढिठाई ।।६१।।
यहि बिधि विपुल बिनोद मोद रसरँगे रसिक वर ।
"सीताशरण" सनेह शील सुख सिन्धु हृदय हर ।।६२।।
दिन में बाला बृन्द राम को चित्त रमावैं ।
हँसि हँसाय बतराय सतत मन मोद बढ़ावैं ।।६३।।
निशि में परम प्रवीन प्रेम पूरति प्रिय वयनी ।
अवनि सुता की सखीं चन्द्र बदनी मृग नयनी ।।६४।।
करैं दिव्य शृँगार सकल मिलि श्री रघुवर को ।
अति रमणीय सु बेष साज साजैं मन हर को ।।६५।।
पिय के विरह वियोग इतै मिथिलेश दुलारी ।
पल पल कल्प समान होत जिय में दुख भारी ।।६६।।
विविध भाँति के बेष बिबिध शृंगार सजावैं ।
किन्तु मैथिली हृदय मध्य यह एक न भावैं ।।६७।।
लोक वेद कुल रीति करैं सखि सिय अकुलावैं ।
पिय के दर्शन बिना हृदय मधि चैन न पावैं ।।६८।।
पिय के शुभ संयोग माहिं जो विलम्ब लगावै ।
लोक मान्य किन होय किन्तु प्रेमिहिं नहिं भावै ।।६९।।

ऐसेहिं साज समाज माहिं सखि समय वितावैं।
सिय को प्रिय नहिं लगै सकुच वश बोलि न पावैं ॥७०॥
पिय दर्शन की चाह हृदय में अति उमगाई।
ऐ सखि कीजै शीघ्र कहत मन माहिं लजाई ॥७१॥
निज निज रुचि अनुसार सखी सब राजकुँवर को।
रचि विचित्र शृंगार सजावैं सुषमा घर को ॥७२॥
कई सहस्र सुचि सखी सतत सिय सेवा माहीं।
निशि दिन सार सँवार करत मन में हुलसाहीं ॥७३॥
करैं सरस शृंगार परम कमनीय हीय हर।
जेहि लखि पावैं मोद राम रसिकेश सु छबिधर ॥७४॥
श्री मैथिली सनेह पगीं सब सखीं सयानी।
सजैं सु रुचि अनुकूल साज सिय को सुख दानी ॥७५॥
यहि प्रकार दासियाँ अमित दिन भर सिय संगा।
सेवहिं सहित सनेह हृदय भरि परम उमंगा ॥७६॥
उबटन तेल लगाय बहुरि मज्जन करवावैं।
पुनि वर भूषण बसन विरचि अंगन पहिरावैं ॥७७॥
तब अवनिजा समाज सहित सजि प्रीतम पासा।
आवैं प्रेम प्रमोद पगीं हिय भरीं हुलासा ॥७८॥
यहि विधि प्रति दिन साजि सखीं सिय को लै आवैं।
करि बहु हास्य विनोद राम मन मोद बढ़ावैं ॥७९॥
यद्यपि श्री मैथिली सतत पिय दर्शन प्यासी।
तदपि सखी जब कहैं चलिय दिखलाय उदासी ॥८०॥

लज्जा बश अस कहैं सखी हम नहिं जावैं गी।
रहने दीजै हमैं यहाँ ही सुख पावैं गी॥८१॥
मदन बाण पर शान धरत यह शब्द सुहावन।
नहिं जाऊँ अस सुनत रसिक लम्पट मन भावन॥८२॥
हृदय बढ़त अति चाह लखौं कब प्राण पियारी।
तदपि परम सकुचात सखिन नहिं कहत बिहारी॥८३॥
सखी भाव सम्पन्न सकल निमिवंश कुमारी।
अतिसय प्रिय सिय केर सरल अति रूप उजारी॥८४॥
सकल कला गुण भव्य दिव्य शिक्षित सुकुमारी।
शिशु पन ते संगीत नृत्य विद्या सुख कारी॥८५॥
सब ने पढ़ी सनेह सहित अति चित्त लगाई।
कुशल सु वृद्धनि कोकशास्त्र की रीति पढ़ाई॥८६॥
पढ़ि विद्या संगीत निपुण अति सकल कुमारी।

याते हे रसिकेश रास रंजन सुख सागर।
दीजिय परमानन्द हमनि कबहूँ गुण आगर ॥९२॥
नव नागर रमणीय नायिका नेह निवाहक।
जय जय परम उदार आप शुचि भाव सुग्राहक ॥९३॥
सखियन कियो विचार हृदय मधि पिय को नामा।
राम सकल रस धाम अखिल चेतन अभिरामा ॥९४॥
रम क्रीड़ा यह धातु अर्थ याको मन भावन।
रमि सबको सुख स्वाद देय सब विधि अति पावन ॥९५॥
पुनि निज संग रमाय सबनि आनन्द बढ़ावै।
करि क्रीड़ा कमनीय सबहिं क्रीड़ा करवावै ॥९६॥
जो सब जग मय रमै सबनि निज संग रमावै।
वाको "सीताशरण" शास्त्र श्रुति राम बतावै ॥९७॥
अस निज हृदय बिचारि सखिन वर विनय सुनाई।
सुनि विनती तिनकेर कीन स्वीकृत रघुराई ॥९८॥
ते सब सखी प्रवीण अपर निमि वंश कुमारी।
चारु चन्द्र सम सुमुखि चपल चितवनि मन हारी ॥९९॥
सकल कला कल कुशल सरस संगीत सु ज्ञाता।
'सीताशरण' सुशील सकल सिय को सुख दाता ॥१००॥
दो०-धारे भूषन बसन वर, अंग अंग सुख सार।
सकल सुगन्धित मोद प्रद, सुषमा गार अपार ॥८॥
अंग अमल आभरन भव्य भूषन बहु धारे।
बिरचित बसन विचित्र चित्त चित्रित मन हारे ॥ १ ॥

नैसर्गिक वर बोध विभावादिक रस बर्षन।
"सीताशरण" सनेह सनी सिय वर हिय हर्षन ॥ २ ॥
सांसर्गिक रघुवीर धीर प्रीतम उदर तर।
रमा सरिस प्रिय रूप नित्य हिय अति उमंग भर ॥ ३ ॥
पगीं परम अनुराग प्राण वल्लभहिं रमावैं।
तिनहिं रमावत राम रमत उन सँग सुख पावैं ॥ ४ ॥
बदत विमल वर वयन सूत शौनक मुनि वृन्दा।
पूर्व कथित सुख स्वाद राम के परमानन्दा ॥ ५ ॥
परम अतीन्द्रिय मनुज काहिं किन कोटि उपाई।
करि करि पचि पचि मरै स्वप्न मधि कबहुँ न पाई ॥ ६ ॥
मुनि अरु सज्जन वृन्द भक्ति युत भाव समाधी।
बिमल बिचार सुदृगन लखत सर्वदा अबाधी ॥ ७ ॥
हिय मधि निशिदिन नवल अमल कलकेलि सुखद वर।
करत माधुरी पान प्रेम पगि अति उमंग भर ॥ ८ ॥
तदपि निकर मुनि बृन्द सुजन जे परम सयाने।
सतत अतीन्द्रिय कहत प्रेम मधि जे मस्ताने ॥ ९ ॥
जो भागवत महान परम ज्ञानी गुण वंता।
प्रभु लीला अवतार तत्त्व ज्ञाता शुचि संता ॥१०॥
जिनको आगम निगम सर्वदा न इति बतावत।
शेष महेश दिनेश कदा कोउ पार न पावत ॥११॥
परब्रह्म परमीश यही व्यापक विभूति बर।
जानत हू यह ज्ञान भुलावत हृदय मोद भर ॥१२॥

सुषमा सींव उदार परम माधुर्य मूर्ति वर।
निरखत होत बिमुग्ध तत्व ज्ञाता प्रवीन तर ॥१३॥
जिन ने दृढ़ सम्बन्ध राम पद कंज लगायो।
प्रभु की कृपा प्रसाद भाव अविचल हिय पायो ॥१४॥
श्री विदेह महिपाल राम को निज जामाता।
मैं उनको प्रिय ससुर कियों दृढ़ येही नाता ॥१५॥
बाढ़ेउ अस अनुराग हृदय बिच लेउँ बिठाई।
अथवा इनको रखौं नयन मधि सतत छिपाई ॥१६॥
ऐसे भाव निमग्न भयो मिथिलेश सुजाना।
लोक विभव रघुवीर काहिं अर्पत बिधि नाना ॥१७॥
परब्रह्म को ज्ञान यदपि सब बिधि महिपालहिं।
तद्यपि भये विमुग्ध निरखि रघुवीर कृपालहिं ॥१८॥
अति अलभ्य श्री राम परम अभिराम ज्ञान घन।
ब्रह्म सच्चिदानन्द कन्द अतिसय उदार मन ॥१९॥
तदपि अनन्या भक्ति जासु जन हृदय बिराजै।
ताहि परम सौलभ्य होत दायक सुख साजै ॥२०॥
तापर करि अति कृपा लेत सब बिधि अपनाई।
परमानन्द प्रवाह माहिं तेहि देत डुबाई ॥२१॥
श्री विदेह महराज हृदय बिच करत बिचारा।
ये रघुवंश कुमार अखिल चेतन आधारा ॥२२॥
देव दनुज नर नाग राम सम कोउ जग नाहीं।
सब से अधिक प्रभाव तेज रघुवर तन माहीं ॥२३॥

जग में विपुल महीप सबनि के राज कुमारा ।
पर नहिं कोइ रघुवीर सरिस विश्वास हमारा ॥२४॥
यदपि अबहिं श्रीराम मधुर बालक सम आहीं ।
मुनि चित चिन्ता रूप महा ज्वर तदपि नसाहीं ॥२५॥
देवत परमानन्द रमत उनके चित माहीं ।
याते "सीताशरण" राम सम अपर न आहीं ॥२६॥
सकल जगत ते भिन्न सरस लीला इन केरी ।
वर्णत शेष महेश नाग नर साधु घनेरी ॥२७॥
अपर न कोउ जग भूप जासु लीला रघुवर सम ।
नृप सब कर्माधीन राम अज अनघ अनूपम ॥२८॥
याते अपर महीप कर्म परतन्त्र सु लीला ।
करत लहत दुख द्वन्द चहत सुख स्वाद रसीला ॥२९॥
श्री अवधेश कुमार कर्म जिनके आधीना ।
निज इच्छा भय प्रगट करत नित चरित नवीना ॥३०॥
इनकी लीला ललित परम रमणीय सुखद वर ।
परमानन्द स्वरूप सतत शोभित प्रमोद कर ॥३१॥
स्वकाम सिद्धा स्वयं अपर कृत हित रत अनुपम ।
सात्विक मयी बिशुद्ध मधुर मन हरन सरस तम ॥३२॥
सज्जन सहित समाज सतत सुमिरत मुनि गावत ।
ध्यावत परम प्रमोद पगे प्रेमामृत पावत ॥३३॥
सर्व कामना रोग समनि चिन्ता मणि रूपा ।
लीला सब सुख करनि अमल अनवद्य अनूपा ॥३४॥

यद्यपि श्री रघुवीर सकल संगीत सु ज्ञाता ।
तदपि आय ससुरार माहिं मन में नहिं आता ।।३५।।
अति लज्जा संकोच बिबश कबहूँ नहिं गावत ।
अपर केर कृत नृत्य गान सुनि सुनि सुख पावत ।।३६।।
भोक्ता बनि श्रीराम लखत आनन्द समाये ।
परम मनस्वी तदपि महां आशक्त जनाये ।।३७।।
गान कला कल कुशल सतत रघुवर रुख राखत ।
मुनि अवधेश कुमार हृदय में अति रस चाखत ।।३८।।
पितु के गृह परिबार मध्य अति सकुच विवस सिय ।
प्रीतम प्राण अधार संग सुख स्वाद न लह जिय ।।३९।।
यद्यपि निशि में मिलत तदपि संकोच न जावै ।
याते श्री मैथिली गान को स्वाद न पावै ।।४०।।
सोचत प्रीतम प्रिया मिलैं एकान्त देश वर ।
जहँ पावौं सुख स्वाद नृत्य संगीत सरस तर ।।४१।।
इत श्री सीताराम मोद मिथिला में पावैं ।
उत अब "सीताशरण" अवध सन्देश सुनावैं ।।४२।।
पूर्व परिग्रह सकल देव गन्धर्व कुमारी ।
गोप सुतादिक सकल विरह वेदना दुखारी ।।४३।।
जब से श्री रघुवीर जनकपुर धाम सिधाये ।
सासु ससुर सब भाँति मोद भरि लाड़ लड़ाये ।।४४।।
परम प्रेम रस भरे सुनयना जनक भुआला ।
करि बहु बिधि सनमान सुखी कीने रघुलाला ।।४५।।

लहि तिनको अति प्यार प्रीति पागे रघुराई ।
अवध पुरी पितु मातु स्वजन सब गये भुलाई ॥४६॥
प्रथम परिग्रह रहीं बिपुल बर बाम अनूपम् ।
जिन संग कियो विलाश रास लीला सुख रूपम् ॥४७॥
जिनने प्राणाधार प्राण वल्लभ रघुवर को ।
प्राणपती प्राणेश मानि सव बिधि छबिधर को ॥४८॥
सेवन कियो सनेह सहित निज सर्बस वारो ।
अपनायो रघुवीर केलि कौतुक विस्तारो ॥४९॥
वे सब सखी समाज हृदय में परम दुखारी ।
अति असमर्थ अधीन कहैं केहि बिपति बिचारी ॥५०॥
परिहरि सब सुख भोग देह अति कृषित वनाये ।
निज दिन रहीं बिताय बिरह दव अंग तपाये ॥५१॥
अतिसय शुष्क शरीर बसहिं श्री अवध मझारी ।
प्रीतम दर्श पियास लालसा बढ़ी अपारी ॥५२॥
प्राणनाथ रघुवीर बसत श्री मिथिला देशा ।
कौन बतावय जाय पिया सों कठिन कलेशा ॥५३॥
प्रीतम पोषित प्रियाँ परम प्रेमामृत पागीं ।
दर्शन आस पियास प्रवल प्रमदा अनुरागीं ॥५४॥
पिय के बिषम बियोग भोग सब रोग समाना ।
त्यागि असन निशि दिवस करत प्रीतम गुण गाना ॥५५॥
जब बीतेउ बहु काल बिरह नित नव अधिकाई ।
सब मिलि कीन बिचार पत्र एक लिखेउ बनाई ॥५६॥

दृग अंजन मसि कीन पत्र लिखि शुकहिं सिखाई ।
मिथिलहिं प्रीतम पास प्रेम युत दीन पठाई ॥५७॥
सो सुक मिथिला गयो लखे नृप सुत रघुनन्दन ।
अति एकान्त सुमोद भरे राजत जग वन्दन ॥५८॥
आयो शुक प्रभु पास चरण मधि वन्दन कीना ।
कहेउ अवध कर हाल पत्र कर में दै दीना ॥५९॥
पढ़ेउ पत्र प्राणेश प्रियन कर लिखित प्यार सों ।
जानत उनकी प्रीति रीति सब बिधि उदार सों ॥६०॥
उनकी भक्ति पवित्र निष्कपट सरल सुभाऊ ।
प्रथमहिं अनुभव करी भली बिधि श्री रघुराऊ ॥६१॥
लिखो पत्र यहि भाँति अहो हृदयेश हमारे ।
हे मम कान्त नितान्त हमनि केहि हेतु बिसारे ॥६२॥
हे प्रिय परम प्रवीण हरेउ हम सब को तुम चित ।
तुम्हरे पति व्रत धर्म छीन लीनों सर्बस वित ॥६३॥
असन सयन बल बुद्धि प्यास भय जग व्यापारा ।
सो सब "सीताशरण" हरे पिय नृपति कुमारा ॥६४॥
जग के सब सुख स्वाद हरे सब भोग हमारे ।
कहिये जीवन प्रान रहौं अब कासु अधारे ॥६५॥
जीव सरिस प्रिय आप नाथ तब पाय वियोगा ।
सूखेउ सकल शरीर मनहुँ बहु दिन को रोगा ॥६६॥
सब इन्द्रीं अरु तत्व बिकल तुम बिन आनँद घन ।
इनको स्वामी जीव नाथ चाहत अब निकसन ॥६७॥

हे नृप कुँवर किशोर कृपा करुणा गुण सागर।
आश्रित सुखद सुजान नेह पालक नव नागर ॥६८॥
प्रीतम परम वियोग प्राण अब चहत सिधावन।
मम उर में नित बसत स्वयं जानत मन भावन ॥६९॥
इन्द्रीं बिकल बिशेष बिरह बेदना अपारा।
कीजै "सीताशरण" कृपा अवधेश कुमारा ॥७०॥
कान सुनत नहि शब्द दृगन कछु दीखत नाहीं।
यहि बिधि सब इन्द्रियाँ शून्य निज कृत न कराहीं ॥७१॥
मम इन्द्रीं अरु प्राण ईश तुमहीं सब के पिय।
जानत सो सब भाँति आप अतिसय उदार हिय ॥७२॥
जब तक जीवन प्राण आप श्री अवध मझारी।
अबहिं गे रसिकेश यहाँ सब भाँति सुखारी ॥७३॥
तब तक हेहृदयेश अवसि मम छुटै शरीरा।
विरह व्यथा बलवान भई हम सकल अधीरा ॥७४॥
हम सब की शुभ कथा सुनैं गे आप मोद भर।
हमनि विना लखि शून्य महल सोंचिहो रसिक वर ॥७५॥
यह सब महल महान मध्य मम पद रज दासीं।
रहती रहीं सु पतिव्रता छबि निधि गुण रासीं ॥७६॥
अस क्यों होई आप कहैं यदि कृपा निधाना।
तो सुनिये नृप लाल करिय मन में अनुरागा ॥७७॥
जब अइहो पिय अवध बहुरी स्वछन्द सुखारी।
करिहैं रास विहार सखिन सँग अति मन हारी ॥७८॥

तब तक जीबन प्राण जानिये जीव हमारो ।
जावै गो यमलोक भरो कामना बिचारो ॥७९॥
नाथ मिलन की आशा प्यास मन में रहि जावै ।
"सीनाशरण" महान यही दुख हमनि सतावैं ॥८०॥
यदि जो कहिये नाथ हमारे विरह अपारा ।
जौ त्यागो गी देह पाइहो स्वर्ग उदारा ॥८१॥
तो सुनिये प्राणेश आप सोचहु मन माहीं ।
तव पद आश्रित भयो स्वर्ग तेहि भावत नाहीं ॥८२॥
वाको करुणा ऐन अपर कोउ वस्तु न भावै ।
तब बिन सो कैवल्य परम पद को ठुकरावै ॥८३॥
तब पद कंज पराग रहित यह जीव हमरो ।
कहीं न पावै शान्ती शोक दुख भरो बिचारो ॥८४॥
मोर आतमा इदं लखे बिन तव पद पंकज ।
सपनेहुँ सुख नहिं लहैं नमत जिन को शंकर अज ॥८५॥
यदि कदापि स्वामिनी मोर मिथिलेश दुलारी ।
उन सँग करै बिहार आप सब भाँति सुखारी ॥८६॥
तिनकी सेवा हेतु प्रयोजन होय हमारा ।
अथवा कोई अपर काज हित नृपति कुमारा ॥८७॥
जब खोजैं गे नाथ आप तब कैसे पइ हैं ।
हम सब मरि तव विरह अगर यम लोक सिधइहैं ॥८८॥
तव तुम्हरी अति कृपा कहो क्या काम बनइहै ।
जो पै जीवन प्राण देह मेरी छुटि जइहै ॥८९॥

यद्यपि परम उदार आप ने कृपा अपारा ।
प्रथम हमनि पर करी दियो सुख बिबिध प्रकारा ॥९०॥
हम सब के कुल दोष आपने सकल मिटाये ।
बहु बिधि प्राण अधार अखिल रस स्वाद् कराये ॥९१॥
सोचनीय अब यही त्यागि पद् कंज तिहारे ।
जावै "सीताशरण" अनत हे राज दुलारे ॥९२॥
जो भी कुछ हो नाथ सहौं मैं निज मन मारी ।
प्राप्त न औरहिं होउँ यही वर विनय हमारी ॥९३॥
क्षीर सिन्धु की मीन कदा लवणाड्व माहीं ।
अथवा जल बिन सुथल मध्य कहुँ जावत नाहीं ॥९४॥
ऐसे ही हेआर्यसुवन मन करिय बिचारा ।
हमनि हाल जस होय जानिये परम उदारा ॥९५॥
पारिजात सुर वृक्ष आश्रयण कृत अलिबृन्दा ।
पीवत परम मरन्द लहत सब बिधि आनन्दा ॥९६॥
निम्वादिक को वृक्ष कहो किमि ताहि सुहावै ।
चहे क्षुधित वरु मरै तदपि तेहि निकट न जावै ॥९७॥
हे प्राणेश सुजान आप को मो सम वामा ।
मिलै विपुल त्रयलोक माहिं सब भाँति ललामा ॥९८॥
पर समस्त ब्रह्माण्ड मध्य तुम सम कोउ नायक ।
मिलै न "सीताशरण" हमनि जानिय रघुनायक ॥९९॥
येही बात बिचारि हृदय में सोच अधिक तर ।
समुझिय "सीताशरण" प्राण वल्लभ सुषमा कर ॥१००॥

दो०-यथा संत कोइ मन्त्र को, अनुष्ठान हर्षाय ।
करै विघ्न तेहि में परै, सो पछिताय अघाय ॥ ६ ॥

अथवा कोइ नर यज्ञ करै बहु द्रव्य लगाई ।
सो बिन पूरे भये हृदय में जिमि पछिताई ॥ १ ॥
उसी भाँति हम सकल आप बिन परम दुखारी ।
सोच मगन दिन रैन कवन सुधि लेइ हमारी ॥ २ ॥
जग अस पण्डित कौन तुमहिं मिल आनहिं ध्यावै ।
यदि जो कोइ अस करै मूर्ख शिर मौर कहावै ॥ ३ ॥
विष्णु सुआश्रित सुजन अधम आश्रयण न करई ।
यदि हट वश अस करै परम भव निधि में परई ॥ ४ ॥
यथा सुधा करि पान तृप्ति होवै सब भाँती ।
अपर पदारथ पान करन की रुचि न रहाती ॥ ५ ॥
तथा अहो प्राणेश निरखि पद कंज तिहारे ।
अपर काहु को लखन हेत इच्छा न हमारे ॥ ६ ॥
हम सब परम अनन्य आप की हे प्रमोद घर ।
अपर आश्रयण नहीं करैं अब परम सुघर वर ॥ ७ ॥
इमि उनको प्रिय पत्र प्रेम मय पढ़ि रघुनन्दन ।
शुचि सनेह नव भाव विबस भै प्रभु जग वन्दन ॥ ८ ॥
उनकी प्रीति पुनीत परखि प्रभु परम प्रवीना ।
बचन बिमल बर बोध बलित पढ़ि धर्म धुरीना ॥ ९ ॥
बाग बहार बिहार बिपुल बिधि हास विलासा ।
सबसे अति उपराम राम भय परम उदासा ॥१०॥

जब से शुक्र ने दई प्रियन की पावन पाती।
पढ़त पिया के प्रवल प्रेम प्रगटेउ बहु भाँती ॥११॥
तब से रमण सु साज सजन को सुखद न लागत।
विपुल विनोद विलाश हास दिशि ते चित भागत ॥१२॥
जब से मिथिला गये जहाँ नित नवल विहारा।
कीने जिन उपबनन मध्य अवधेश कुमारा ॥१३॥
अब सोई वर गाग सोइ सब सुखद समाजा।
तदपि प्रसन्न न होत रसिक वर श्री रघुराजा ॥१४॥
यह सब प्रेम प्रभाव जासु महिमा जग भारी।
प्रेम चहै सो करै परम मुद मंगल कारी ॥१५॥
जब प्रेमी सब त्यागि एक प्रीतम को ध्यावै।
निश्चय "सीताशरण" पिया को स्ववश बनावै ॥१६॥
श्री मिथिलापुर बधू बिपुल बिधि विरचि समाजा।
करत रहीं रघुवीर संग कौतुक तजि लाजा ॥१७॥
करि क्रीड़ा कमनीय कला कुशला सब नारी।
पावहिं परमानन्द करसि रघुवरहिं सुखाखरी ॥१८॥
वहु बिधि हास बिनोद केलि करि प्रभुहिं रिझावैं।
पगीं परम अनुराग हृदय में अति सुख पावैं ॥१९॥
वे सब जब अस सुनै आज रघुराज उदासा।
आवहिं प्रभु के पास दौरि बहु करहिं प्रयासा ॥२०॥
जब न होत प्रतिकस्थ मुर्छि सोइ गिरति अवनि पर।
कोइ न भयो समर्थ मोद प्रगटै रघुवर उर ॥२१॥

लखि उदास रघुवीर दृष्टि श्री मातु सुनयना ।
मुर्छित भई बिशेष दशा सो कहत बनैना ॥२२॥
पुरुष प्रवल प्रभु प्रेम पगे मुर्छित महि माहीं ।
गिरे देह सुधि भूलि चलत उठि पुनि गिरि जाहीं ॥२३॥
पशु पच्छी महिं परे मुर्छि तन सुरति न आवै ।
"सीताशरण" सु राम दशा को वर्णि सुनावै ॥२४॥
जिन रघुवर सँग किये बिबधि बिधि हास विलाशा ।
वरणै "सीताशरण" कवन बिधि सुमति प्रकाशा ॥२५॥
उनकी कैसी दशा भई यह कौन बतावै ।
सो सुधि "सीताशरण" होत तन चेत भुलावै ॥२६॥
श्री मिथिलेश सुजान विविधि विधि कीन उपाई ।
यन्त्र मन्त्र झरवाय विपुल औषधी पवाई ॥२७॥
किन्तु स्वस्थ नहिं भये राम रघुवंश ज्ञान घन ।
प्रेम रोग तन लगेउ लहै कैसे अनन्द मन ॥२८॥
कानों कान सँदेश पाय श्री चक्रवर्ति वर ।
भेजे मिथिलहिं श्री सुमन्त बहु दूत साथ कर ॥२९॥
लै आवैं रघुवरहिं वेगि श्री अवध मझारी ।
मैं देखौं भरि नयन यही अभिलाप हमारी ॥३०॥
प्राणाधिक प्रिय मोहिं राम मम दृगन सितारे ।
मिथिलाधिप से कहेउ पठावहिं परम सुखारे ॥३१॥
अस मन कीन बिचार ससुर गृह में जामाता ।
बहुत दिनन तक रहे उचित नहिं कह श्रुति ज्ञाता ॥३२॥

परम सकोची लाल बहुरि ससुरार समाजा ।
याते आवैं अवध शीघ्र अति श्री रघुराजा ।।३३।।
पुनि बीते कछु काल जाहिं गे मिथिला धामा ।
निरखि राम मुख कंज सकल पइहैं अभिरामा ।।३४।।
हैं सुमन्त नीतिज्ञ परम वक्ता गुण आगर ।
सब बिधि अतिसय चतुर बिचारत नृपति उजागर ।।३५।।
अस निज मन गुनि राव साथ बहु सैन सजाई ।
श्री सुमन्त कँह दीन जनक पुर धाम पठाई ।।३६।।
करि मन में विश्राम पहुँच गे मिथिला माहीं ।
सुनि विदेह सत्कार कीन मिलि हिय हर्षानीं ।।३७।।
तब सुमन्त ने कहा सुनहु हे तिरहुति राजा ।
भेजो हमहिं महीप बुलावन हित रघुराजा । ३८।।
याते अब मन मुदित राम को देहु पठाई ।
सुनि नृप निश्चय कियो देत आयसु सकुचाई ।।३९।।
जन मन की रुचि जान राम सर्वज्ञ सुजाना ।
समुझाये महिपाल प्रेम से कृपा निधाना ।।४०।।
बोले बचन बिनीत विमल रघुवर सकुचाई ।
गुरु पितु माता केर सतत आज्ञा सुख दाई ।।४१।।
अब आयसु मोहिं देहु आप हू पूज्य हमारे ।
भक्ति सहित प्रिय बचन सुनत नृप भये सुखारे ।।४२।।
उचित जानि मिथिलेश चलन नी कीन तयारी ।
मिथिला वासी सकल सुनत अति भये दुखारी ।।४३।।

आज जाँय गे राम नृपति आयसु दै दीनी।
राज द्वार पर सजन लगी प्रिय साज नवीनी ॥४४॥
हय गय रथ बहु पलंग बसन उपधान सोहावन।
असन अनेक प्रकार रत्न भूषण मन भावन ॥४५॥
लखि तैयारी सबनि कीन मन माहिं बिचारा।
अवसि जायगे अवध आज श्री राम कुमारा।४६॥
अस निश्चय जब भयेउ तबहिं सब मिथिला बासी।
अति करुणा उर भरे प्रेम वश भये उदासी ॥४७॥
इधर सुनयना आदि सकल सिय की महतारी।
जैइहैं राम कुमार अवध सुनि भईं दुखारी ॥४८॥
अति वियोग भय भरेउ दृगन जल धार बहावैं।
संग सकैं नहिं जाय रहब किमि हिय पछतावैं ॥४६॥
करि न निवारण सकैं बनी यात्रा सुख दाई।
श्री मैथिलिहिं लगाय हृदय रोवत विलखाई ॥५०॥
करैं न कबहूँ बिलग प्रवल इच्छा मन माहीं।
पर विधि वश परतन्त्र चलै अपनो बल नाहीं ॥५१॥
कहैं वचन भरि प्यार अहो मम राज किशोरी।
हम देखेउ तब विभव जन्म के समय घनोरी ॥५२॥
अयोनिजा हे पुत्रि तुमहिं करि कृपा महाना।
प्रगटायो मम सदन देन अति सुख भगवाना ॥५३॥
अब येही वर विनय श्रवण कीजै सुकुमारी।
जहँ जन्मौं जग माहिं तहाँ हे प्राण अधारी ॥५४॥

मानि मातु को नात कृपा की दृष्टि निहारेउ ।
त्तमा रूप लाड़िली कदा जनि मोहिं बिसारेउ ॥५५॥
कैसो निठुर कठोर विश्व सृष्टा अति भारी ।
कहा कहौं में वाहि कृपामयि तव महतारी ॥५६॥
जो कराय संयोग परस्पर स्वजनन माहीं ।
पुनि दै विषम बियोग सबनि मन सकुचत नाहीं ॥५७॥
निज बिरचित वर सृष्टि स्वयं ही सकल नशावै ।
किंचित "सीताशरण" दया तेहि हृदय न आवै ॥५८॥
जो होती कछु कृपा विरह वेदना अपारा ।
तो नहिं विषम वियोग देत काहुहिं कर्तारा ॥५९॥
इतनोई सन्तोष एक मेरे मन माहीं ।
चक्रवर्ति नृप तनय प्राण वल्लभ तव आहीं ॥६०॥
रूप शील गुण खानि सतत आश्रित सुख दायक ।
मिले तुमहिं प्रिय प्राण नाथ सुन्दर सब लायक ॥६१॥
यही परम सुख हमहिं शोच कछु नहिं मन माहीं ।
पर निज जननी जानि सुरति मन विसरै नाहीं ॥६२॥
औरौ सब सिय मातु प्रेम वश परम दुखारी ।
सिय को कण्ठ लगाय सकल भरि लोचन वारी ॥६३॥
समुझावैं बहु भाँति अचल सौभाग्य तुम्हारो ।
होवै "सीताशरण" सु आशिर्वाद हमारो ॥६४॥
तव बिन हे लाड़िली आगमी अदिन हमारे ।
अब तक लहि तव दर्श भरे सुख शान्ति अपारे ॥६५॥

पूर्ण भये सौभाग्य जगे दुर्भाग हमारे।
उदय भये तव भाग अवध में जाहु सुखारे ॥६६॥
श्री कौशल्या आदि महा रानी नृप केरी।
जागे उनके भाग कीन जिन पुण्य घनेरी ।६७॥
मंगल मय शुभ दिवस महाँ रानी सब पइहैं।
हम अभाग्य वश यहीं महल मधि रहि पछितैइहैं ॥६८॥
वे सब महल महान भाग्य शाली सुख रूपा।
जहँ रहि हो रघुवीर संग तुम युगल स्वरूपा ॥६९॥
अब यह महल अभाग भरे अतिसय दुख दाई।
तव बिन सूने लगैं जगत मधि कछु न सुहाई ॥७०॥
जिनको कहि तुम मातु गोद चढ़ि गर लपटानी।
उनकी "सीताशरण" कहे अब कौन कहानी ॥७१॥
जाइय सुख युत अवध महारानिन सुख देहू।
मोहिं अभागिनि जानि बिसरि जनि जाय सनेहू ॥७२॥
यहि बिधि बोलैं बचन तबहिं आये मिथिलेशा।
समुझायो बहु भाँति सबनि यों कहेउ नरेशा ॥७३॥
कन्या केर पयान समय मंगल मय बानी।
बोलो मिलि अब सकल तजहु सब शोच गलानी ॥७४॥
बचन अमंगल मयी अश्रु दृग करुणा भारी।
तुम सब को यों निरखि होति सिय परम दुखारी ॥७५॥
अति करुणा रस निरखि सिया जनि जाय डराई।
सब मिलि "सीताशरण" देहु आशीश सुहाई ॥७६॥

इमि अति धीरज दीन सबहिं मिथिलेश सुजाना ।
भूल्यो बिषम वियोग जन्य दुख धीरज आना ।।७७।।
सुनि नृप बचन रसाल सकल बोलीं सुख पाई ।
श्री हर गौरि प्रसाद लली चिर होउ सदाई ।।७८।।
बाढ़ै नित सौभाग्य सु जीवन होय तुम्हारा ।
निज प्रीतम के संग लहो सुख स्वाद अपारा ।।७९।।
जिमि गौरी शिव सँग विष्णु संग रमा विराजें ।
पगे परम अनुराग परस्पर अति छबि छाजें ।।८०।।
तिमि श्री राम सुजान बाम अँग मधि सुकुमारी ।
सदा परम छबि लहो यही आशीश हमारी ।।८१।।
इमि सु अश्रु दृग भरे प्रेम पगिं सब महतारी ।
पुण्य रूप चन्द्रमा किरण सम बचन सुखारी ।।८२।।
कहैं समय अनुकूल बहुरि रघुवर सों बोली ।
बचन मधुर प्रिय सरस मनहुँ प्रेमामृत घोली ।।८३।।
हे नृप कुँवर उदार चतुर शिर मौर सुभग तर ।
ग्राहक भाव पुनीत प्रेम पालक प्रमोद घर ।।८४।।
यह मम सिय लाड़िली अबहिं अतिसय सुकुमारी ।
बाल भाव सम्पन्न अधिक गुण गण नहिं धारी ।।८५।।
गुरु जन माता पिता सतत लालित अति प्यारी ।
गुण अवगुण को ज्ञान भली बिधि नहिं हिय धारी ।।८६।।
यह अबोध सब भाँति बनै यदि कछु अपचारा ।
तदपि न करिये रोष हृदय मधि राज कुमारा ।।८७।।

इनके माता पिता समर्पण कीन सुखारी।
सब विधि अपनी जानि कीजिये सार सँवारी ॥८८॥
अयोनिजा मैथिली अपर नायिकन समाना।
नहिं इन की उत्पत्ति स्वयं प्रगटी जग जाना ॥८९॥
धर्म सुपत्नी मोर सतत पद पंकज दासी।
निज किंकरि सम जानि छोह रखिये सुख रासी ॥९०॥
अनपायिनी अभिन्न सर्वदा शक्ति हमारी।
अस विचारि कीजिये कृपामृत सींचि सुखारी ॥९१॥
माता निज दीनता राम को रहीं दिखाई।
यद्यपि मेरी सुता ललन तव भोग्य न अहई ॥९२॥
तद्यपि प्रबल सम्बन्ध भयो स्थिर सब भाँती।
सुदृढ़ प्रीति की रीति लाल नाहिन कहि जाती ॥९३॥
तुम सुजान सर्वज्ञ कहहु निज हृदय बिचारी।
धर्म पास रचि ईश सकल लीला बिस्तारी ॥९४॥
यामें बँधि संसार परस्पर सब ब्यवहारा।
करत प्रेम परतन्त्र सतत मिलि सकल प्रकारा ॥९५॥
इमि कहि बचन बिनीत विमल वर बोध समाये।
अभिनन्दन करि मातु राम छबि हृदय बसाये ॥९६॥
प्रगटेउ प्रेम प्रवाह प्रबल जल धार दृगन सों।
रुँधेउ सबनि को कण्ठ भई मन मौन मगन सों ॥९७॥
हिय अन्तर अस गुनै अहो भवितव्य महाना।
दै संयोग सुख हमनि अपूरब रचेउ बिधाना ॥९८॥

अब सोइ ईश उदार बहुरि वर विरह वियोगा।
दै है हम सक काहिं बिकल होइ हैं सब लोगा ॥९९॥
अम्ब सुनयना आदि सकल निज हृदय दुखारी।
"सीताशरण" सनेह बिकल नहिं नयन उघारी ॥१००॥
दो०–उधर उदार सु कीर्ति धर, श्री मिथिलेश महान।
सौंपेउ सीताशरण सब, रामहिं तन मन प्रान ॥१०॥
रामहिं सर्वस सौंपि हृदय में यही विचारत।
हमने कुछ नहिं दियो सकुच वश भूमि निहारत ॥ १ ॥
रघुकुल भूषण राम परम अभिराम सु छबि धर।
शूर वीर रणधीर नृपति अवधेश कुँवर वर ॥ २ ॥
चलत समय अनुराग अमल आनन्द पान कर।
बिषम वियोग विपत्ति विरह वेदना विकल तर ॥ ३ ॥
मिथिला बासी सकल नेह भरि राम निहारे।
प्रगटेउ प्रेम प्रकाश कछुक मन भये सुखारे ॥ ४ ॥
अवध निवासिन मिलन जन्य आनन्द अपारा।
मैथिल विषम वियोग द्वन्द रघुवर मझधारा ॥ ५ ॥
एकहिं एक दबाय रहे सोचत रघुनन्दन।
न्युनाधिक केहि करौं सकुच बस आनँद कन्दन ॥ ६ ॥
पुरवासी नर नारि सकल प्रिय परम वियोगा।
महाँ खिन्न मन भये लगेउ मानहुँ तन रोगा ॥ ७ ॥
बजत बिपुल वर वाद्य सरस मन हर सुख दाई।
मैथिल सकल उदास समय तेहि कछु न सुहाई ॥ ८ ॥

बोलत हय गय बिपुल विप्र वर वेद उचारत।
विद्वत जन समुदाय शान्ति प्रद पाठ पुकारत ॥ ६ ॥
मिलि पुरजन समुदाय परस्पर बोलत बाता।
रुदन करत सब वाम नेह मन पुलकित गाता ॥१०॥
पुरुषहु भरे वियोग मोद मन तनक न काहू।
अतिसय होत अधीर सबनि को गयो उछाहू ॥११॥
प्राणाधिक प्रिय राम सजीवन जीवन जी के।
अतिसय सरल स्वभाव मधुर तर बचन अमी के ॥१२॥
तिनके बिषम बियोग समय सब धीरज त्यागी।
रोवत "सीताशरण" निजहिं अति मानि अभागी ॥१३॥
सब विधि धीरज धरै नहीं अस कोउ नर नारी।
"सीताशरण" सनेह सने तन सुरति बिसारी ॥१४॥
पुर बासी सब बध दृगन भरि प्रेम सु आँसू।
वर्षावहिं जल धार लेहिं सब परम उसाँरू ॥१५॥
अश्रु प्रवाह अपार खुलत तिनके दृग नाहीं।
अतिसय करुणा भरीं कम्प तन माहिं जनाहीं ॥१६॥
मध्य भाग झुकि गये प्रेम पगि धैर्य बिसारी।
हो न सकै सो खड़ी परम असमर्थ दुखारी ॥१७॥
लखि तिनकी अस दशा सकल सुर अरु सुर नारी।
"सीताशरण" सनेह सने पावत दुख भारी ॥१८॥
पुनि कछु हो प्रति कस्थ करैं स्तुति सब केरी।
अब जाइय निज सदन सबनि दुख लहेउ घनेरी ॥१६॥

मंगल समय बिचारि मुदित श्री राम कुमारा।
गमने "सीताशरण" हृदय भरि विरह अपारा ॥२०॥
स्वर्ण रत्न मणि रचित बिपुल पालकी सोहावन।
तिन मधि बिलसैं बधू प्रेम पूरित प्रिय पावन ॥२१॥
मन भावन पालकीं सूर्य सम ज्योति जगावैं।
मानो मोतिन माल मुदित मारग छबि पावैं ॥२२॥
कियो अबनि शृँगार विपुल भूषण पहिराई।
बरसत सुर गन सुमन जयति बोलत हर्षाई ॥२३॥
व्योम बिमान बितान बने अति घने सोहाये।
नहिं लागत तन घाम सु मारग मृदुल बनाये ॥२४॥
सरस सुगन्धन सहित सुजल कण बर्षत देवा।
मारग श्रम सब हरत करत प्रमुदित निज सेवा ॥२५॥
श्री विदेह लाड़िली मैथिली राज किशोरी।
अखिल लोक अभिराम राम सुन्दर वर जोरी ॥२६॥
अवध निवासिन केर परस्पर भाव सुभग तर।
लखि अस अनुभव होत मनोसुख सिन्धु सु छबिधर ॥२७॥
मिथिला अवध मिलाय दोउन को एक बनाई।
बाँटत परमानन्द प्रेम पूरक रघुराई ॥२८॥
जाय अबध रघुवीर शीघ्र मिथिलापुर अइहैं।

उनकी प्रीति सु रीति जबहिं सोचत श्री रामा ।
अतिसय होत अधीर धीर धुर प्रभु सुख धामा ।।३१।।
मातन को वात्सल्य सखन को भाव अपारा ।
सखियन को नव नेह सुमिरि रघुवंश कुमारा ।।३२।।
अतिसय भरत बियोग रोग नाशक रघुराई ।
वरसत दृग जल धार पुलकता तन मधि छाई ।।३३।।
लखि रघुवर की दशा कौन कवि थाह लगावै ।
"सीताशरण" सुजानशेश शिव श्रुति सकुचावै ।।३४।।
जानत कोइ मैथिली कृपा भाजन जन जोई ।
जग में "सीताशरण" अपर अनुभवै न कोई ।।३५।।
जाके हिय शुचि प्रेम प्रगट प्रीतम पद पंकज ।
ध्यावत "सीताशरण" जिनहिं नर मुनि शंकर अज ।।३६।।
सोइ पिय कृपा कटाक्ष पाय अनुभव कछु पावै ।
किंचित "सीताशरण" अन्य यह रस नहिं ध्यावै ।।३७।।
पुनि धरि धीर उदार भक्त सुख दान रसिक वर ।
करि मग में विश्राम गये निज नगर मुदित उर ।।३८।।
श्री मैथिली समेत नेह भरि महल पधारे ।
पुरबासी नर नारि सु छबि लखि भये सुखारे ।।३९।।
यथा योग मिलि सबहिं दियो परितोष सकल बिधि ।
करि अनुकूल चरित्र सुखी कीने करुणानिधि ।।४०।।
अपनो बिषम वियोग रोग दुख दूर भगायो ।
कहि मृदु वयन रसाल सबनि मन मोद बढ़ायो ।।४१।।

सकल मातु अरु पितहिं दीन सुख स्वाद अपारा ।
पूजे गुरु महिदेव संत करि बहु सत्कारा ॥४२॥
श्री मैथिली समेत राजनन्दन मन भावन ।
परिजन पुरजन सुखी किये कर चरित सुहावन ॥४३॥
रसमय युगल स्वरूप शील गुण सु छबि निहारी ।
"सीताशरण" सनेह सने पुर जन बलिहारी ॥४४॥
जयति युगल मन हरन मधुर तर सरस सुखद वर ।
प्रीति प्रतीति प्रमोद प्रेम पागे सुषमा घर ॥४५॥
जयति युगल चितचोर मोर रसिकन मन रंजन ।
जय जय "सीताशरण" प्रेम पालक भव भंजन ॥४६॥
जयति युगल मुख चन्द मन्द मुस्कान प्रान हर ।
जय जय रसिक उदार प्राण प्रीतम सीता वर ॥४७॥
जयति अमल अनुराग रूप रस निधि सुषमा कर ।
जय जय 'सीताशरण' सतत सज्जन प्रमोद कर ॥४८॥
जयति स्वामिनी सीय जयति रघुवंश कुवँर वर ।
जय जय रसिकन प्राण सरिस प्रिय परम मधुर तर ॥४९॥
जयति मैथिली मंजु जयति रसिकेश सु छविधर ।
जय जय सीताशरण" सरस सुख प्रद सनेह घर ॥५०॥
जयति लाड़िली सीय सतत आश्रित जन पालक ।
जय जय श्री रघुवीर धीर खल वल दल घालक ॥५१॥
जयति प्रिया परतन्त्र प्रेम पूरक नव नागर ।
जय जय "सीताशरण" रसिक वल्लभ रस सागर ॥५२॥

दो०–जय जय जीवन प्राण मम, श्री मैथिली उदार ।
जय जय सीताशरण नित, पिय सिय पर बलिहार ॥

इति श्री युगल रहस्य माधुरी बिलेशे, विवाह रास विकाशे
श्री "सीताशरण" सुमति प्रकाशे
सप्तमोऽध्यायः सम्पूर्ण ।

श्रीमत्यै सर्वेश्वर्यै श्रीचारुशीलायै नमः

* श्री भरत चालीसा *

दोहा—भव्य भावना भजन रत, भरे भक्ति भण्डार ।
वन्दौं चरण सरोज नित, श्रीमद् भरत उदार ॥

चौपाई—

जय जय श्रीमद् भरत उदारा । सिय रघुवर पदप्रेम अपारा ॥
जय जय क्षमा रूप करुणामय । कोमल चित्त सुशील कृपामय ॥
जय जय सब जग पोषन हारे । पावन चरित भुवन बिस्तारे ॥
जय जय प्रेममूर्ति मन भावन । श्यामल बपु शत मदन लजावन ॥
जय सियराम भक्त शिरताजा । भजत सदा सिययुत रघुराजा ॥
जय जय दीन बन्धु सब लायक । ध्यावत सदा तुमहिं रघुनायक ॥
सीताराम नाम के जापक । स्वारथरहित भक्ति जगथापक ॥
तुम्हरो नाम जपत रघुनन्दन । करत प्रसंशा प्रभु जग वन्दन ॥
सीताराम प्रेम की मूरति । मंजुल मधुर सरस प्रिय सूरति ॥
सब स्वारथ तजि प्रभुपद सेवत । जगके सब भक्तन सिख देवत ॥
सीताराम रूप नित ध्यावहु । स्वारथ तजि परमार्थ बनावहु ॥
परमारथ स्वरूप सिय रघुवर । सेवहु पद पंकज उमंग भर ॥
अस उपदेश करत करि दाया । निज चरित्रसे सबहिं सिखाया ॥

प्रभु आज्ञा निज सर्वस जानी । सेवा करत परम सुख मानी ॥
रघुनन्दन मानत लघुभाई । तुम सेवक सम करि सेवकाई ॥
परम भाग अपने जिय जानत । प्रभु सेवा निज सर्वस मानत ॥
श्री रघुवर मुख कमल निहारत । प्रेममगन तन सुरति बिसारत ॥
कबहुँ नाथ आज्ञा मोहिं देवैं । हम सेवा करि हिय सुख लेवैं ॥
यही एक अभिलाषा मन में । भरी रहत उमंग अति तन में ॥
नित प्रभु चरण पादुका पूजत । रसना राम नाम मुख कूजत ॥
ध्यावत सीताराम सप्रेमा । दृढ़ करि करत कठिन व्रतनेमा ॥
नन्दिग्राम में गुफा बनाई । चौदह वर्ष भजे रघुराई ॥
जगके सब सुख स्वाद भुलाई । पूजि पादुकन हिय हर्षाई ॥
सार सँवार अवध को कीनो । प्रभु पद पंकज मन चित दीनो ॥
अवध सकल जगकी रजधानी । सम्पति लखि सुर पुरी लजानी ॥
तहँबसि त्याग बिराग धरे तन । ध्यावत प्रभु पद पद्म मुदितमन ॥
द्रोणाचल अंजनि सुत लाये । अबधपुरी ऊपर जब आये ॥
तुम लखि निशिचर हियअनुमानी । नष्ट करै यह प्रभु रजधानी ॥
बिन फर तुरत बान सन्धाना । लागत मुर्छि गिरे हनुमाना ॥
राम राम सियराम उचारत । गिरत समय हनुमान पुकारत ॥
निकट जाय प्रभुदास बिचारी । खिन्न हृदय अतिभये दुखारी ॥
करि प्रयास हनुमतहिं जगाई । अति सनेह युत हृदय लगाई ॥
प्रभु के समाचार जब जाने । तब अतिसय मनमें पछिताने ॥
कह हनुमत चढ़ बान हमारे । पठावौं जहँ प्रभु कृपा अगारे ॥
चरण वन्दि हनुमान सिधाये । दै संजीवनि लखन जगाये ॥

असुरन हति प्रभु अवध पधारे। लखि पद पंकज भये सुखारे॥
राजा श्री रघुवरहिं बनाई। कीनी पद पंकज सेवकाई॥
है जगमहिमा अमित तिहारी। मैं अति दीन मलीन दुखारी॥
"सीताशरण" शरण में आयो। तव पद पंकज ध्यान लगायो॥
राम बन्धु आपन जन जानी। दीजै दर्शन हिय सुख मानी॥

दोहाः—हे जन रक्षक भक्तवर, शील सनेह अगार।
कृपा क्षमा करुणासदन, प्रेमामृत दातार॥
निज पद पंकजदास गुनि, सर्व समर्थ उदार।
दीजै सीताशरण नित, निज पद पंकज प्यार॥
तव सुकृपा कण पाय जन, सिय रघुवर पद प्रीति।
पावैं "सीताशरण" नित, अचल अमल रस रीति॥

卐 आरती 卐

आरति भरत लाल की कीजै।
मधुर सुमूरति लखि सुख लीजै॥ १॥

तुम्हरी महिमा जगमें भारी, शेश गणेश गिरा कहिहारी।
विधि हरि हरहू पार न पावैं, पुष्पांजलि दै आनन्द भीजै॥आ०॥
परमानन्द प्रेम की मूरति, श्याम वरन अतिसय सुठिसूरति।
सीताराम जपत निशिवासर, लखत वज्रवत हृदय पसीजै॥आर०॥
रामबन्धु सुचि सरस सुभाऊ, स्वरथ गन्ध न मनमें काऊ।
साधन सिद्ध नेह रघुवर पद, करुणनिधि दासन को दीजै॥आ०॥
ध्यावत सीताराम स्वरूपा, मंजुल मन हर परम अनूपा।
हियबिच उमगत रघुकुलभूपा, 'सीताशरण' शरण रखिलीजै॥आ०



* श्री जानकी जी की प्रार्थना *

कृपारूपिणिकल्याणि, राम प्रिये श्री जानकी ।
कारुण्य पूर्ण नयने, दया दृष्टयाव लोकय ॥ १ ॥
पापानां वाशुभानां वा वधार्हाणां प्लवङ्गम् ।
कार्यं कारुण्यमार्येण न कश्चिन्नापराधयति ॥ २ ॥
सर्व जीव शरण्ये श्री सीते वात्सल्य सागरे ।
मातृ मैथिलि सौलभ्ये, रक्षमां शरणागतम् ॥ ३ ॥
कोटिकन्दर्प लावण्यां, सौन्दर्य्यैक स्वरूपताम् ।
सर्व मङ्गल माङ्गल्यां, भूमिजांशरणं ब्रजे ॥ ४ ॥
शरणागत दीनार्त परित्राण परयाणाम् ।
सर्वस्यार्ति हरेणैक धृतव्रतां शरणां ब्रजे ॥ ५ ।
सीतां विदेह तनयां रामस्य दयितां शुभाम् ।
हनुमता समाश्वस्तां भूमिजां शरणं ब्रजे ॥ ६ ॥
अस्मिन् कलिमला कीर्णे काले घोर भवार्णवे ।
प्रपन्नानां गतिर्नास्ति श्रीमद्राम प्रियां बिना ॥ ७ ॥
उद्भवस्थिति संहारकारिणीं क्लेशहारिणीम् ।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम् ॥ ८ ॥

* भक्त सर्वस्वम् *

हे मैथिली हृदय पङ्कज भृङ्गराज,
हे स्वीय भक्त जनमानस राजहंस ।
हे सूर्यवंश विभुवैभव रामचन्द्र,
त्वत्पाद पङ्कजरजः शरणं ममास्तु ॥ १ ॥
हे मैथिली हृदय पङ्कजभृङ्ग नाथ,
हे भक्तवत्सल कृपाकर राघवेन्द्र ।
हे दीन रक्षक शरण्य सुखस्वरूप,
त्वत्पाद पङ्कजरजः शरणं ममास्तु ॥ २ ॥
हे मैथिली हृदय भूषण कान्ति कान्त,
हे नील पद्म रुचिरांघ्रि युगस्वयम्भो ।
हे विश्वनाथ रघुनाथ वरेण्यकीर्ते,
त्वत्पाद पङ्कजरजः शरणं ममास्तु ॥ ३ ॥
हे मैथिली हृदय मन्दिर शुभ्रमूर्ते
हे वायुपुत्र परिसेवित पद्म पाद ।
हे आशुतोष जगदीश्वर भक्तिलभ्य,
त्वत्पाद पङ्कजरजः शरणं ममास्तु ॥ ४ ॥
हे मैथिली हृदय राजमणे रमेश,
हे सर्वगः प्रणतपालक दीनबन्धो ।
सृष्टि स्थिति प्रलय लीला महानुभाव,
त्वत्पाद पङ्कजरजः शरणं ममास्तु ॥ ५ ॥

हे मैथिली हृदय वल्लभ रूप राशे,

हे सर्व श्रुति वचस्तुत राघवेश ।

हे पापपुञ्ज दहनानल देव देव,

त्वत्पाद पङ्कजरजः शरणं ममास्तु ॥ ६ ॥

हे मैथिली हृदय हार मनोजमूर्ते,

हे शर्वरीश विमलानन सर्वशक्ते ।

हे भक्तवश्य करुणालय नित्यमूर्ते,

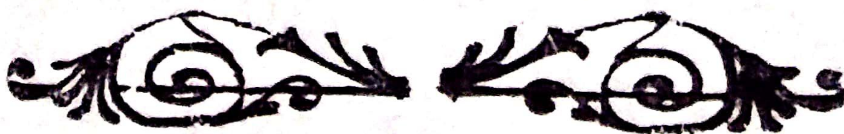
त्वत्पा पङ्कजरजः शरणं ममास्तु ॥ ७ ॥

हे मैथिली हृदय वास जगन्निवास,

हे भूमिभार हृदनीश जगच्छरण्य ।

हे राम हे रघुपते रघुवीर धीर,

त्वत्पाद पङ्कजरजः शरणं ममास्तु ॥ ८ ॥



सन्त तुलसीदास प्रिंटिंग प्रेस, तुलसीचौरा, श्रीअयोध्याजी ।